CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Funding: MIDF

ज्ञानोदय-पुस्तक-माला—तृतीय पुष्प

...ष्ठ-प्रवेश

...गवाशिष्ठ-प्रवेश

(...गवाशिष्ठ का सार-संकलन)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव !
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

लेखक
गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द. नं. ६४८०

वा०वि०पु०

वेदान्त
१८८

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ज्ञानोदय पुस्तक माला—पुष्प ३

योगवाशिष्ठ-प्रवेश

[योगवाशिष्ठ का सार-संकलन]

लेखक

श्री गणेश चौबे

प्रकाशक

श्री किशोरी प्रसाद मंत्री

ज्ञानोदय-पुस्तक-माला-प्रकाशन समिति

नामदा वस्ती, गोलमुरी

जमशेदपुर

प्रथम संस्करण जनवरी १९६८ **मूल्य ३ रुपये**

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकाशक :
श्री किशोरी प्रसाद
मंत्री
ज्ञानोदय-पुस्तकमाला-प्रकाशन समिति
नामदा वस्ती, गोलमुरी, जमशेदपुर

सर्वाधिकार सुरक्षित—लेखक

प्रथम संस्करण, जनवरी १९६८

मूल्य—३ रुपये

पुस्तक मिलने का पता—

(१) श्री किशोरी प्रसाद, ब्रास आर्टस पैलेस, चर्च रोड, रांची
(२) राजेन्द्र स्टोर्स, साकची बाजार, जमशेदपुर
(३) गुप्ता स्टोर्स, घतकीडिह, जमशेदपुर
(४) ज्योत्स्ना प्रकाशन मंदिर, स्टेशन रोड, डिहरी, पो० डालमियानगर (बिहार)

मुद्रक :
श्री पी० सी० मिड्ढा
मिड्ढा प्रेस
८-ए, दरियाबाद, (कल्याणी देवी)
इलाहाबाद—३

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द. नं. ६४८०

प्रिय भार्य्या की पुण्य स्मृति में.........।

लेखक की धर्म पत्नी स्वर्गीय श्रीमती दुलारी देवी जी !
जन्म लगभग १९१४
मृत्यु दिनांक ५-६-१९६३

लेखक—गणेश चौबे
१९-११-६७

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूमिका

(विद्यावाचस्पति प्रो० बच्चन पाठक 'सलिल')

योगवाशिष्ठ एक महान् आर्ष ग्रंथ है। जिस ग्रंथ की रचना मर्यादा पुरुषोत्तम राम के संदेह के निवारणार्थ हुई तथा जिसके सिद्धान्तों का प्रतिपादन ऋषिप्रवर वशिष्ठ ने स्वयं किया, उसकी महत्ता के सम्बन्ध में कुछ अधिक कहना आवश्यक नहीं है।

मनुष्य नाना प्रकार के कष्टों और अभावों से पीड़ित है। वह उस ब्रह्म का अंश हैं, जो आनन्दमय है; तथापि मनुष्य 'आनन्द पक्ष' को विस्मृत कर जाता है। इस स्थायी आनन्द की अनुभूति ही कष्टों और अभावों से मुक्ति पाने का एक मात्र सहारा है। यही योग-वाशिष्ठ का मुख्य विषय है।

भौतिक वस्तुओं की इच्छा समाप्त हो जाय, एक स्वतः मानसिक प्रेरणा के कारण इनकी अनित्यता का ज्ञान हो जाय, व्यक्ति 'सोऽहम्' का अनुभव करने लगे, भौतिक शरीर को धारण करते हुए भी 'बन्धन-मुक्त अवस्था' प्राप्त हो सके, यही योगवाशिष्ठ का सार-संक्षेप है।

वशिष्ठ जी ने इस ग्रंथ में 'आत्म-ज्ञान' को सर्वोपरि बताया है। ईश्वर का निवास हमारे अन्तर में है, कहीं जाकर उसका अनुसंधान नहीं करना है, यह सत्य बार बार बताया गया है।

कर्म के सम्बन्ध में योगवाशिष्ठ और गीता में मतैक्य है। वशिष्ठ जी के अनुसार जीवन कर्म है, विचार कर्म है, मनुष्य आजीवन कर्मरत रहता हैं। यदि निष्काम कर्म की साधना की जाय, तो कर्म बन्धन के कारण नहीं होते।

ज्ञान बौद्धिक नहीं अपितु अनुभव-गम्य है। सच्चा ज्ञान (अनुभव पूर्ण ज्ञान) प्राप्त करने वाले पुरुष 'ज्ञानी' हैं और शास्त्रों का कोरा ज्ञान प्राप्त करने वाले 'ज्ञानबन्धु' हैं। 'ज्ञानबन्धु' शास्त्रों का

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अध्ययन सांसारिक सुखों के लिए करते हैं। वे प्रमादी होते हैं तथा अनावश्यक विवादों में पड़े रहते हैं। वे अज्ञानियों से भी बुरे हो जाते हैं। किन्तु ज्ञानी निरन्तर आत्म-चिन्तन करते हैं और बन्धन-मुक्त हो जाते हैं। इसी दिशा में किया गया प्रयत्न ही योग है। इसके तीन मार्ग वशिष्ठ जी ने बतलाए है—(१) सर्वव्यापी चैतन्य की प्रतीति का प्रयत्न (२) मन का संयम और (३) प्राण-वायु के नियमन द्वारा विभिन्न भावनाओं का निरोध।

योगवाशिष्ठ प्रत्येक व्यक्ति के लिए पठनीय और आचरण करने योग्य है। पर कठिनाई यह है कि यह एक विशाल-ग्रंथ है, जिसमें ३२ हजार श्लोक हैं। साधारण साधक और जिज्ञासु के लिए इसका आद्यन्त पठन संभव नहीं है। उसकी भाषा भी क्लिष्ट है तथा उसमें 'पुनरुक्ति' की भी भरमार है।

श्री गणेश चौबे साधारण भाषा में, पत्र-शैली में सांस्कृतिक एवं धार्मिक साहित्य लिखने में कुशल हैं। श्री चौबे जी सचमुच कर्मयोगी हैं। अपराध और अपराधियों के बीच रहते हुए भी 'पद्मपत्र-मिवाम्भसा' की उक्ति चरितार्थ करते हैं, तथा अपने चिन्तन का वातायन उन्मुक्त रखते हैं।

'योगवाशिष्ठ-प्रवेश' के द्वारा सामान्य जिज्ञासु लाभान्वित होंगे, इससे आकर्षित होकर वे मूल ग्रंथ पढ़ेंगे तथा पुनः 'ज्ञानी' बनने की चेष्टा करेंगे, यह विश्वास है।

आज के भौतिक प्रधान वातावरण में श्री चौबे जी का यह सत्प्रयास मंगलमय हो, यही प्रभु से कामना है।

प्राध्यापक-निवास,
कॉलेज रोड,
जमशेदपुर—१
बसन्त पंचमी १९६७

बच्चन पाठक 'सलिल'

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपनी ओर से

योगवाशिष्ठ के वहिरंग से मेरा पुराना परिचय है। प्रायः नौ वर्ष की अवस्था में, मैं अपने पूज्य पितृव्य बाबा गङ्गादासजी के [illegible] कुटिया, डिहरी स्थित, शिवगंज स्थान में रहता था। वहाँ महात्माओं की टोली बहुधा आया-जाया करती थी। उन महात्माओं के हाथों में मुझे योगवाशिष्ठ की पोथी देखने को मिलती।

अपने प्रयाग-प्रवास काल में पूज्य राजर्षि पुरुषोत्तमदास जी टन्डन के सम्पर्क में आने का अवसर मिला। उन्होंने मुझे योगवाशिष्ठ के अध्ययन की प्रेरणा दी। तब से मैं इस ओर विशेष दत्तचित्त हुआ; किन्तु ईश्वर की इच्छा से वह पिपासा अधूरी रह गयी। श्री गणेश चौबे से मैंने अपनी इच्छा व्यक्त की। फलस्वरूप योगवाशिम्ठ-प्रवेश की रचना हुई।

योगवाशिष्ठ-प्रवेश पढ़ कर मेरे मन की अनेक गुत्थियाँ स्वतः सुलझ गयी हैं। मेरे हृदय को अपार शान्ति मिली है। मुझे विश्वास है समानधर्मा पाठक-पाठिकाओं को योगवाशिष्ठ की अमृत-वाणी में सुखमय जीवन-यापन की नयी दिशाएँ मिलेंगी।

योगवाशिष्ठ-प्रवेश में विद्वान् लेखक ने पाठकों को आर्षभाषा के गहन वन से निकाल कर, लोक वाणी के सरल एवं प्रशस्त राज मार्ग पर लाकर खड़ा कर दिया है। इसकी भाषा इतनी सरल, आकर्षक एवं प्रवाहमयी है कि एक बार पुस्तक हाथ में लेने पर बिना आद्योपान्त पढ़े छोड़ने की इच्छा नहीं होती। मुझे विश्वास है कि इस दिव्य ग्रंथ के पठन-पाठन से सभी अपरिमित लाभ उठाएँगें।

अत्यन्त सावधानी बरतने पर भी छापे की अनेक अशुद्धियाँ अज्ञानवश रह गयी हैं, उनका दायित्व मात्र मेरा है। अतएव मैं हृदय से इस प्रमाद के लिए क्षमा प्रार्थी हूँ।

लक्ष्मी नारायण
मंत्री

स्थायी निवास—ग्राम दरीहट
थाना—डिहरी जिला शाहाबाद
अधुना—टेल्को वर्कर्स यूनियन
टेल्को, जमशेदपुर—४ (विहार)
१७ सितम्बर १९६७

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सम्मति

'योगवाशिष्ठ' महा रामायण या वशिष्ठ रामायण के नामों से भी विख्यात है। ग्रंथ भारत में ही नहीं विश्व साहित्य में सूक्ष्म विचार ज्ञानात्म और तत्व निरूपक ग्रंथों में सर्व श्रेष्ठ है। स्वयम् भगवान् वशिष्ठ ने ही कहा है कि—"संसार सर्प के विष से विकल तथा विषय-विसूचिका से पीड़ित मृतप्राय: प्राणियों के लिए योग-वाशिष्ठ परम पवित्र अमोध गरूड़-मंत्र है।" इसके विचार, भाषा शैली अलंकार दर्शन, सब एक से एक अमूल्य हैं।

योगवाशिष्ठ में महर्षि वशिष्ठ ने श्रीराम को महा विष्णु बतलाया है। भाग्यवान् गुरुवर वशिष्ठ को श्री राम-सा योग्य अधिकारी दूसरा कौन मिल सकता था। स्वयम् वशिष्ठ के हृदय में प्रविष्ट हो, प्रश्न कर ज्ञान प्रकट किया।

योगवाशिष्ठ के विषय—वैराग्य, मुमुक्षु, व्यवहार, उत्पति, स्थिति उपशम व निर्वाण प्रकरण हैं; जिसको गणेश जी ने रोचक ढंग से सरल भाषा में पाठकों के सामने रखा है। यों विषय तो अतीव गहन है। भगवान् वशिष्ठ-सा ज्ञानोपदेशक गुरू, श्री रामचन्द्र भगवान्-सा योग्य श्रोता और शिष्य और श्री गणेश जी-सा एक श्रद्धालु ज्ञान पिपासक भक्त के वचनों के सामने किसी भी पंक्ति में बैठने की कल्पना या अधिकार नहीं रखता, तो फिर कहूँ तो क्या! स्वयम् पाठक गण इसे पढ़ें और समझें।

यह भारत ज्ञान-रवि की एक अनुपम रश्मि है। इसमें संसार के थपेड़ों से पीड़ित चिन्तित व्यक्तियों के लिए, संसार से तरने के उपाय, दैव पुरुषार्थ, मन, आत्मा और परमात्मा का पूर्ण और सूक्ष्म विवेचन है। इसके अध्ययन से सुख-शान्ति अवश्य मिलेगी। कल्याणमार्गी इससे अवश्य लाभ उठावें।

ग्राम कोठरा,
थाना सासाराम
जिला शाहाबाद
८-३-१९६७

अवध बिहारी मिश्र
एम० बी० बी० एस०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री गणेश चौबे जी द्वारा संपादित यह छोटी-सी पुस्तक पढ़कर मन को अत्यन्त प्रसन्नता हुई। मनुष्य के जीवन में एक न एक ऐसा समय आता है जब उसका मन संसारिक दुखों को देख कर उचाट हो जाता है और वह दुखी रहने लगता है। जैसे एक समय श्रीरामचन्द्र तीर्थाटन से लौटने पर संसारिक दुखों को देख कर बहुत ही दुखी हो गये। तब महर्षि वशिष्ठ ने उन्हें समझाया। रामचन्द्रजी को उनको उपदेशों से आत्म-ज्ञान हुआ—शान्ति मिली। मनुष्य को भी ऐसे समय में इस आत्म-ज्ञान को आवश्यकता है। श्री चौबे ने सीधी सरल भाषा में "यौगवाशिष्ठ" लिख कर मनुष्य को इस मानसिक पींड़ा से छुटकारा पाने में सहायता की। "योगवाशिष्ठ" सर्वसाधारण के लिए उपयोगी सिद्ध हो-यह मेरी हार्दिक कामना है।

कर्नल रघुबीर सिंह बरार
टेल्को

राम लखन पाण्डेय
प्राचार्य
राज बहूद्देशीय विद्यालय, डुमरांव (शाहाबाद)

दिनांक १४-१०-६७

प्रिय गणेश जी,

आपके गीतामृत, कठोपनिषद-प्रकाश, मेघदूत एवं योगवाशिष्ठ को पढ़कर बड़ी प्रसन्नता हुई। हमारा अधिकांश संस्कृत वामय हमारे लिये प्राय: नाममात्र रहा है। हम अपने वेद-वेदान्त, उपनिषद्, पुराणादि का नाम लेकर अपने को गौरवान्वित समझते हैं। उनके अध्ययन, मनन, चिन्तन का समय कहाँ। इसका प्रधान कारण भाषा की जटिलता रही है। अनुवाद भी हुए हैं। पर उनकी भी भाषा एवं शैली सम्भवत: सर्व साधारण के लिये दुरूह ही प्रतीत होती है। अत: आपने दुर्ग्राह्य विषयों को चलती भाषा एवं शैली में लिख एक अभाव की पूर्ति का प्रयत्न किया है। निश्चय ही आपकी पुस्तकें पढ़ने के बाद मूल पुस्तकों का अध्ययन सरल हो जायेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आशा है हमारे नवयुवक इनका अध्ययन कर लाभान्वित होंगे। भगवान् आपको सफलता प्रदान करें।

आपका शुभैषी
राम लखन पाण्डेय

श्री चौबे जी की रचना—योगवाशिष्ठ-प्रवेश—बड़े प्रेम से पढ़ा। बड़ा आनन्द आया। इनकी सरल भाषा, जिसमें एक-एक शब्द दरसाया है—उल्लेखनीय है। आपका लग्न इस शुभ कार्य की ओर जाते देख, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है।

इस पुस्तक में लिखी कथाएँ बहुत शिक्षाप्रद हैं। इनसे पाठकगण अतीव लाभ उठाएँगे।

प्रभु चौबे जी को शक्ति प्रदान करें—यही हमारी कामना है।

एन टाउन, विस्टोपुर बाल कृष्ण शर्मा
जमशेदपुर २२–६–१६६७

पं० गणेश चौबे का 'योगवशिष्ठ' देख गया। रचना पसन्द आई। गंभीर विषयों को सरल सुबोध भाषा में कह डालने की कला चौबे जी ने विकसित की है। 'योगवशिष्ठ' जैसा अध्यात्म ग्रंथ इतनी सरल भाषा में उतरेगा यह कल्पना नहीं थी। चौबे जी इसके लिए धन्यवाद के पात्र हैं।

आशा से, सभी अध्यात्म प्रेमी पाठक इससे लाभान्बित होंगे। लेखक की लगन और उत्साह देखकर यह आशा बँधती है, कि वे अन्य सांस्कृतिक ग्रंथों को भी जन सुलभ बनाएँगे।

डा० सत्यदेव ओझा
हिन्दी विभाग एम० ए० पी० एच० डी०
जमशेदपुर कोआपरेटिअ कॉलेज अध्यक्ष
जमशेदपुर
४–६–६७

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नम्र निवेदन

जमशेदपुर

प्रिय पाठक-पाठिकाएँ ! दिनांक २९–१०–६७

सादर प्रणाम !

मेरी प्रथम दो रचनाओं—गीतामृत और कठोपनिषद्-प्रकाश—को अपना कर, आप सबों ने मेरा हौसला बढ़ाया है। मैं आप सबों का अतीव आभारी हूँ।

गीता को पत्रों में अपने प्रिय मित्र के लिए ही प्रस्तुत किया था। छपाने की मनसा से कतई नहीं लिखा था। बाद में छपाने की प्रेरणा मिली। तब पत्रों की प्रतिलिपि लेकर, अपने पूज्य गुरु श्री लक्ष्मी नारायण सिंह, एम० ए० साहित्यरत्न, मंत्री लोक सेवक मंडल, लाजपत भवन, इलाहाबाद के पास गया। पढ़ कर सुनाया। आपने बड़ी प्रसन्नता से कहा—"इसमें गंगा-सा प्रवाह है एक बार हर कोई पढ़ जायेगा।" फिर आपने ही छपाई कराई, छपाई समाप्त होते समय, दुबारा आपके पास इलाहाबाद गया, पुस्तक छप जाने पर देखा--आपकी खुशी का पारावार नहीं था। आपने हर्ष भरे शब्दों में कहा—"न जाने मैंने कितनी पुस्तकें पढ़ीं, गीता के सभी श्लोक जबानी याद हैं—लेकिन मेरी कोई रचना अब-तक न छपी। आज तेरी रचना छप जाने से मेरी खुशी का ठिकाना नहीं है। अब तो मेरी यही आकाँक्षा है कि तू लिखते जा और मैं छपाता जाऊँ ! कम से कम, एक पुस्तक प्रेस में हमेशा रहे।" और भी कहा— "मेरे पास कम से कम दो हजार निजी पुस्तकें हैं तथा लाजपत भवन की लाइब्रेरी भरी पड़ी है—पुस्तकें ले जाकर पढ़-पढ़ रचना किया करें।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उनके ये शब्द अभी भी गून्जते हैं। संशोधन 'प्रुफ रीडिङ्ग' आदि में, आपके अथक घोर परिश्रम को देख कर चकित हो जाता हूँ। गीतामृत की रचना के शुरू तथा अंत में आपके पास हफ्ते-हफ्ते भर रहा। आप तथा आपके परिवार से जो प्यार मिला—वह दरसाया नहीं जा सकता।

आपने गीतामृत को पुस्तक-माला के प्रथम पुष्प के रूप में निकालने की इच्छा प्रकट की तथा ज्ञानोदय पुस्तक माला नामकरण भी आपने ही किया। सही माने में ज्ञानोदय-पुस्तक-माला का सृजन आप ने ही किया।

आपने मुझे कठोपनिषद् पढ़ने की राय दी। साथ-साथ पुस्तकें भी दीं। आपके निर्देशानुसार कठोपनिषद्-प्रकाश की रचना की। आपने घोर परिश्रम कर पुष्प दो के रूप में उसे सहर्ष छपाया।

फिर, आपने योगवाशिष्ठ पढ़ने की प्रेरणा दी। पुस्तकें भी दीं। फलतः योगवाशिष्ठ-प्रवेश की रचना हुई, जो आप सबों के सामने ज्ञानोदय-पुस्तक-माला के पुष्प तीन के रूप में प्रस्तुत है। आशा है आप लोग अपना कर मेरा हौसला पूर्ववत् बढ़ायेंगे।

योगवाशिष्ठ-प्रवेश के बाद मेघदूत-दर्शन की रचना हुई जो पुष्प चार के रूप में छप चली है। पाचवाँ पुष्प मनुस्मृति-संदेश की भी पाण्डुलिपि तैयार है छपने के लिए भेजी जाने वाली है।

मित्रों! मैं पढ़ालिखा नहीं के बराबर हूँ। रचनाएँ भगवान् की अनुकम्पा तथा लोगों की सद्भावना एवं आशीर्वादवश ही हो रही हैं। सब कुछ पूजास्वरूप ही हो रहा है।

स्टेट बैंक साकची में ज्ञानोदय-पुस्तक-माला के खाते में सेभिंग बुक खोला गया है। पुस्तकों की बिक्री के रुपये उसी में जमा किये जाते हैं। चेक द्वारा छपने के लिए भेजे जाते हैं। बिक्री और खर्च

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का हिसाब रखा जाता है। प्रस्तावित ज्ञनोदय-पुस्तक-माला प्रकाशन समिति को वैधानिक रूप देना है। आगे का कार्यक्रम भगवत् इच्छा पर ही निर्भर है।

संयोगवश आदरणीय श्री लक्ष्मीनारायण सिंह जी जमशेदपुर आ गये हैं—भगवत् इच्छा समझ टेलको यूनियन के सेक्रेट्री का कार्य भार सम्भाला है। फिर भी छपाई का भार आप ही वहन करते हैं।

आप संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी के उच्च कोटि के विद्वान् हैं। आपके द्वारा संपादित आप के लेख के साथ "राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन–व्यक्तित्व एवं संस्मरण" प्रकाशित हो चुका है। राजर्षि टण्डन की जीवनी आपने करीब पाँच सौ पृष्ठों में लिखी है। अर्थाभाव से प्रकाशित न हो सका है। भगवान् करें--निकट भविष्य में प्रकाशित हो जाय!

आपका शिष्य के प्रति अटूट अथाह स्नेह शिक्षक-वर्ग के लिए आदर्श रूप है। आपका त्यागमय जीवन औरों के लिए प्रेरणाप्रद है। बहुत कम आदर्श पुरुषों को दुनिया उनके जीवन में समझ पाती है। बहुतों को तो कष्ट ही झेलने पड़ते हैं।

जैसा कि मैंने गीतामृत के शुरू में ही लिखा है--'राँची में रहते हुए, मैं अपने मित्र किशोरी प्रसाद, चर्च रोड राँची के साथ जगन्नाथ पुर में गुरू जी (श्री राम रक्ष उपाध्याय जी) के पास प्रत्येक इतवार को गीता पढ़ने जाया करता था। बड़े प्यार से आप पढ़ाया करते थे। चाय आदि से स्नेह-पूर्वक सत्कार किया करते।

गीतामृत की पाण्डुलिपि लेकर मैं गया तो आप अतीव प्रसन्न हुए। कुछ अस्वस्थ-सा लगे। बोले--"अगले महीने में जमशेदपुर जाने वाला हूँ--वहीं देखूँगा।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसी बीच आप का देहान्त हो गया। आप प्रकाशन न देख सके। दिल पर गहरी चोट आती है। काश ! आज जीवित होते तो रचनाओं को देख-देख कितना खुश होते। मैं उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। उनकी दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रभु से प्रार्थना करता हूँ। उनके परिवार के सुख की कामना करता हूँ।

अन्य सज्जनों से भी काफी सहायता मिली है। मैं सबों का आभारी हूँ। प्रभु सब को प्रसन्न रखें।

भवदीय,

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लेखक श्री गणेश चौबे अपने पुत्र चि० रमेश के साथ ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आत्मपरिचय

मेरा जन्म भाद्र शुक्ल त्रयोदशी बुधवार विक्रम सम्बत् १९७१ को अपने पैतृक गाँव कोठरा, थाना सासाराम जिला शाहाबाद, प्रान्त बिहार में हुआ। प्रायः सम-उमरिया चार भाई—मुझसे एक बड़े श्री जनक चौबे और दो छोटे—देवराज व रामराज।

मेरे पिताजी (स्वर्गीय पं० शिवनन्दन चौबे) बचपन में ही चल बसे। मेरी माँ (श्रीमती राधिका देवी जी) को ही खेती-गृहस्थी व हम चारों भाइयों के पालन-पोषण का भार उठाना पड़ा। पिताजी की मृत्यु के समय मेरे भैया 'अपर' में पढ़ते थे। मेरी पढ़ाई अभी शुरू नहीं हुई थी। उन्हें पढ़ाई छोड़नी पड़ी।

मेरे पितृकुल में शिक्षा एकदम न थी। सभी निरक्षर थे, लेकिन मेरे ननिहाल का घराना—ग्राम एघारा, थाना गढ़ नोखा, जिला शाहाबाद—खानदानी पंडित। मेरी माँ पढ़ी न होने पर भी बहुत तीव्र बुद्धि की तथा व्यवहार एवं कार्य में कुशल। बहुत प्रतिष्ठित, बहुत अध्यवसायी—मोटे शब्दों में सभी अच्छे गुणों से परिपूर्ण।

मुझे पढ़ाने की मेरी माँ की प्रबल इच्छा थी। शायद उसने मुझमें कुछ विशेष गुण पाया हो। पिता जी मामूली जायदाद छोड़ कर मरे थे। माँ के पास कुछ रुपये थे। वह अपने प्रयास से धन में वृद्धि ही करती गई।

सब गुणों के होते हुए भी माँ ने हम लोगों की शादी में बहुत जल्दी की। मेरी शादी ८ वर्ष की उम्र में हुई। गौना तीन साल के बाद। उसके बाद मेरी पढ़ाई शुरू हुई। एक डेढ़ साल में लोअर तक की पढ़ाई जैसे-तैसे समाप्त की। अपर में अपने गांव से ५ मील दूर सासाराम में नाम लिखाना पड़ा व मिडिल में बांक मिडिल स्कूल में। उस जमाने में मेरी बस्ती में कौन कहे, आस-पास के गांवों में, कहीं स्कूल न थे। बस्ती में कोई बतानेवाला नहीं मिलता था।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विचित्र ढङ्ग से मेरी माँ मुझे पढ़ाया करती। ककहरा, गिनती और कुछ पहाड़े उसे जबानी खयाल थे। रात के सोने के समय पढ़ाया करती थी। जब मैं ककहरा वगैरह पढ़ गया तो वह चिट्ठी का मजमून बोलती और मुझसे लिखवाती। फिर मुझे पढ़ने को कहती। अगर मैं सही-सही पढ़ देता तो वह कहती ठीक—बहुत खुशी होती। अगर न पढ़ सकता तो गलत क्योंकि खुद तो पढ़ी नहीं है।

मिडिल पास करने के बाद सासाराम हाई स्कूल में दाखिल हुआ। वहीं से सन् १९३७ में मैट्रिक पास किया। पढ़ते समय घर की खेती में भी हाथ बटाना पड़ता था। भैया उस समय साल में प्रायः चार-पांच महीने बीमार रहते और मुझे स्कूल छोड़ना पड़ता था। शायद ही कभी पूरे साल पढ़ाई की हो।

मेरे ममेरे भाई पं० बैजनाथ तिवारी संस्कृत के अच्छे विद्वान् हैं। मैं स्कूल की छुट्टियों में उन्हीं के साथ ननिहाल में रहता था। उस समय वे संस्कृत पढ़ रहे थे। संस्कृत की ओर मेरी प्रवृत्ति उन्होंने जगाई। मैं उनसे संस्कृत के श्लोक सुना करता था। संस्कृत के श्लोक सुनने में बहुत मधुर लगते हैं।

बचपन में ही सामाजिक बुराइयों व देश की गुलामी के विरुद्ध विद्रोह की भावना भड़क पड़ी थी। १९३५ के लिखे मेरे अप्रकाशित लेख—कलियुग के रईस, धर्म के ठीकेदार पण्डे आदि से इनकी पुष्टि होती है। आज भी ये लेख मौजूद हैं। शायद कभी छप जायँ।

मेरी कामना लेखक व लीडर बन देश की आजादी की लड़ाई में सक्रिय भाग लेने की थी; लेकिन परिस्थिति के सामने झुकना पड़ा। कॉलेज की शिक्षा सुलभ न हो पाई। मैट्रिक पास कर गाँव में स्कूल खोला, बनवाया। अभी क्लास ६ तक चल रहा है।

सन् १९३८ के अन्त में जमशेदपुर आया। यहीं से पुलिस में सन् १९४२ में गया और अभी हूँ। मेरी पढ़ाई में मेरी धर्मपत्नी का सराहनीय सहयोग रहा है। मुझे मित्र-धन सदा प्रचुर प्राप्त रहा है। शेष जीवन में मेरी इच्छा धर्म-ग्रंथों का पठन-पाठन कर उन्हें सरल व बोलचाल की भाषा में प्रस्तुत करने की है।

—गणेश चौबे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषय-सूची

अध्याय पृष्ठ

१. विषय-प्रवेश १७
२. वैराग्य-प्रकरण— २४
(क) रामचन्द्र जी की ज्ञान-भरी वैराग्य की बातें २४
(ख) शब्दों के अर्थ ... ३२
३. मुमुक्षु-प्रकरण— ३७
(क) शुकदेव जी की आत्म-ज्ञान-प्राप्ति कथा ... ३७
(ख) वशिष्ठ जी की उत्पत्ति-कथा ... ४२
४. उत्पत्ति-प्रकरण— ५६
(क) ब्रह्म क्या है ? ... ५८
(ख) मन की शक्ति व स्वरूप का वर्णन... ६५
(ग) रानी लीला की कथा ... ६८
(घ) इन्द्र और अहिल्या की कथा ... ७६
(ङ) इन्द्र जाल की कथा ... ८०
(च) बालकथा ... ८७
(छ) ज्ञान की सात भूमिकाएं ... ९२
५ स्थिति-प्रकरण— ९८
(क) भृगुपुत्र शुक्र की कथा ... १००
(ख) दासूर मुनि और वन पुत्र की कथा... १०६
(ग) कच-गीता वृतान्त ... १०९

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

६. उपशम-प्रकरण— ११४
(क) इस प्रकरण के मुख्य विषय ... ११४
(ख) राजा जनक के मुक्त होने की कथा ... ११७
(ग) पुण्य और पावन की कथा ... १२०
(घ) ईसा-मसीह की सांकेतिक चर्चा ... १२५
(ङ) राजा बली की कथा ... १२६
(च) गाधी ब्राह्मण की कथा ... १३०
(छ) राजा सुरघु की कथा ... १३५
(ज) भास-विलास संवाद ... १३९
(झ) वीतहव्य की कथा ... १४१
७. निर्वाण-प्रकरण-पूर्वार्द्ध— १४७
(क) प्रार्थमिक बातें ... १४७
(ख) जीवन-मुक्त होने की युक्ति ... १४८
(ग) काकभुशुण्डि की कथा ... १५१
(घ) भगवान् शिव-वशिष्ठ संवाद ... १५७
(ङ) अर्जुन की कथा ... १५९
(च) राज शिखिध्वज और रानी चुड़ाला की कथा ... १६४
(छ) नारी चर्चा ... १७७
८. निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्द्ध— १७९
(क) प्रासंगिक बातें ... १७९
(ख) विद्याधर की कथा ... १८१
(ग) ब्राह्मण मङ्की की कथा ... १८३
(घ) पुरुषार्थी-लकड़हारे की कथा ... १८५
(ङ) परिश्रम का महत्व ... १८९
(च) उपसंहार ... १९०

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विषय-प्रवेश

हिनू-राँची
प्रिय मित्र,
३१-८-६६

सादर प्रणाम !

आप की प्रेरणा से तथा सिर्फ आप के लिए ही, मैंने गीता की चर्चा पत्र के माध्यम से ही दि० ३१–१०–६४ को शुरू की थी; जिसे दिनांक ९–२–६५ को समाप्त कर पाया था। आप के पास लिखे गए, व्यक्तिगत पत्र ही, भगवान् की कृपा से, 'गीतामृत', के नाम से प्रकाशित हुए। लोगों ने उसे अपना कर हम दोनों का हौसला बढ़ाया। फलत: हम दोनों ने पत्र के माध्यम से ही कठोपनिषद् की चर्चा की। रचना कठोपनिषद्-प्रकाश* के नाम से प्रकाशित होने ही वाली है।

अपने व्यक्तिगत पत्रों को जनता के लाभार्थ प्रस्तुत कर, आप ने बड़ा उपकार किया है। कितने लोग गीतामृत पान कर, लाभान्वित हुए और कितने होते रहेंगे। सब का श्रेय एकमात्र आपको ही है।

मैं तो **मित्र** ! सिर्फ आप की ख़ुशी के लिए ही लिखता हूँ। मेरे ये पत्र, आप के द्वारा पढ़े जाते हैं—बस, इतने भर से मेरा मनोरथ पूरा हो जाता है। साथ-साथ लिखते समय अपने को आप के समीप पाता हूँ। ऐसा लगता है—मानो, आप के पास बैठकर बातें कर रहा हूँ।

कठोपनिषद्-प्रकाश की समाप्ति पत्र में, आप से बिदा लेते हुए, मैंने योगवाशिष्ठ की चर्चा में पुनः मिलने को लिखा था। तो, फिर, आइए—चर्चा शुरू करें।

---

*कठोपनिषद्-प्रकाश प्रकाशित हो चुका है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लेकिन, **मित्र** ! शर्त वही पुरानी—हम दोनों के लिए इन दर्शन-शास्त्रों की सिर्फ जानकारी और इनके ज्ञाता बनने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती; आवश्यकता तो है—इनके उपदेशों को जीवन में उतारने और उनके अनुरूप अपने जीवन को ढालने की।

आइए, इसी उद्देश्य से ही योगवाशिष्ठ का पठन-पाठन प्रारम्भ करें।

पुराने जमाने में, अयोध्या नगरी में राजा दशरथ राज्य करते थे। उन्हें तीन रानियाँ—कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा—थीं। बुढ़ापे में उन्हें चार पुत्र—कौशल्या से रामचन्द्र, कैकेयी से भरत और सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न हुए। राम चन्द्र जी सब में बड़े थे। कुछ बड़े होने पर, रामचन्द्र जी तीर्थाटन पर गए। लौटने के बाद उनका मन ससार से उचट गया। उन्हें समस्त भोग-वस्तुएं नीरस लगने लगीं। जीवन ही भार-स्वरूप प्रतीत होने लगा। खाना-पीना, आहार-विहार—सब कुछ धीरे-धीरे त्यागने लगे और खोये-खोये रहने लगे। शरीर दिन-पर-दिन सूखने लगा।

पुत्र की ऐसी दशा देख कर, राजा दशरथ जी बहुत चिन्तत हुए। उन्होंने अपने कुलगुरु महर्षि वशिष्ठ जी से समझाने के लिए विनती की।

वशिष्ठ जी ने रामचन्द्र जी को कर्म योग, ज्ञान योग आदि का उपदेश दिया। जगत मिथ्या-निरा काल्पनिक है—का भान कराया। मन का सविस्तार वर्णन किया। जीवन-मुक्त होने की युक्ति बता कर, उनका मोह-भ्रम दूर किया। रामचन्द्र जी को उनके उपदेशों से आत्म-ज्ञान हुआ और वे खुशी-खुशी रहने लगे।

वशिष्ठ जी के द्वारा रामचन्द्र जी को दिए गए, उपदेश ही आज योग-वाशिष्ठ के नाम से उपलब्ध हैं।

प्रिय मित्र ! अच्छा होगा कि आप राम-कथा का शेष सारांश भी सुन लीजिए। फिर, योग-वाशिष्ठ के कथा प्रसंग पर आवें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सयाने होने पर रामचन्द्र जी की शादी, जनकपुर के राजा जनक की कन्या-सीताजी—के साथ हुई। पिता की आज्ञा से वे चौदह वर्ष के लिए वन गए। उनकी पत्नी-सीता जी तथा छोटे भाई-लक्ष्मण जी भी साथ गए। इसी बीच, पुत्र वियोग में राजा दशरथ जी चल बसे। उधर बन से सीता जी को लंका का राजा रावण चुरा ले गया।

बनवासी राम, प्रिय पत्नी की खोज में, बन-बन भटकते फिरे। सयोगवश किष्किन्धा के राजा सुग्रीव से मिताई हुई। फिर, सुग्रीव की सेना की मदद से सीता जी का पता कर, रामचन्द्र जी ने लंका पर चढ़ाई की और रावण को मार कर सीता जी को वापस लाए।

चौदह वर्ष बीतने पर, भाई और पत्नी के साथ वे अयोध्या लोटे और राज्य करने लगे। उनके राज्य में प्रजा बहुत सुखी थी। आदर्श राज्य के लिए, राम-राज्य कहावत बन गया है।

एक दिन, एक खुफिया ने रामचन्द्र जी से कहा—"महाराज! लंका में रही महारानी सीता को, रखने से प्रजा अप्रसन्न है।"

रिपोर्ट क्या थी!! महारानी सीता के लिए निर्वासन-पत्र ही। तत्काल लक्ष्मण को शाही हुकुम मिला—"ले जाओ, महारानी सीता को जंगल में छोड़ आओ।"

बस, सीता जी महल से जंगल में पहुँचा दी गईं। उस समय, सीता जी गर्भवती थीं। वे वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में रहने लगीं। वहीं लव और कुश नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। वाल्मीकि जी ने दोनों पुत्रों को पाला। अंत मे, सती सीता को दोनों पुत्रों के साथ रामचन्द्र जी को सौंप दिया।

विशेष जानकारी के लिए, आप तुलसी कृत रामायण पढ़ें। ज्यादा बहकना ठीक नहीं।

प्रिय मित्र! रामचन्द्र जी को लोग भगवान् का अवतार ही मानते हैं। कुछ पुरुषोत्तम राम भी कहते हैं। रामावतार और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कृष्णावतार प्रसिद्ध हैं। कृष्णावतार में भगवान् कृष्ण ने अपने मित्र अर्जुन को उनका मोह दूर करने के लिए, गीता का उपदेश दिया। यहाँ भगवान् रामचन्द्र जी को ही मोह हुआ और उन्हें उपदेश मिला महर्षि वशिष्ठ जी से।

मित्र! आज कल जैसी पुराने जमाने में इतिहास लिखने की प्रणाली नहीं थी। इससे नहीं कहा जा सकता कि योगवाशिष्ठ की रचना कब हुई? गीता तथा उपनिषदों में इसके श्लोक पाए जाते हैं—इससे अनुमान किया जाता है कि ईसकी रचना गीता तथा उपनिषदों से पहले की है।

कहा जाता है कि योगवाशिष्ठ के उपदेश महर्षि वशिष्ठ को सृष्टि के शुरू में ही स्वयम् ब्रह्मा से प्राप्त हुए थे। उन्होंने राम-चन्द्र जी से कहा और उन्होंने ही इसकी रचना भी की।

योगवाशिष्ठ में कुल बत्तीस हजार श्लोक हैं जो नीचे लिखे छः प्रकरणों में विभाजित हैं।

	श्लोक संख्या
१. **वैराग्य-प्रकरण**—इसमें वैराग्यभरी बातें सुन्दर ढंग से श्री राम चन्द्र जी के द्वारा कही गई हैं।	१५००
२. **मुमुक्षु-प्रकरण**—मोक्ष के जिज्ञासुओं, पूरुषार्थ आदि का वर्णन है तथा मुक्ति प्राप्ति के साधन बताए गए हैं।	१०००
३. **उत्पत्ति-प्रकरण**—संसार मन का कल्पना मात्र है; यह तो उपजा ही नहीं भ्रमवश ही भासता है आदि बातें मनोहर कहानियों के माध्यम से बताई गई हैं।	७०००
४. **स्थिति-प्रकरण**—सारा विश्व एक ब्रह्म का ही	३०००

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

	विस्तार है, आदि का बोध कराया गया है।	
५. **उपशम-प्रकरण**	—पिछले विषयों को और परिष्कृत किया गया है तथा विषय-वासनाओं से छुटकारा पाने के साधनादि बताए गए हैं।	५०००
६. **निर्वाण-प्रकरण**	—उपर्युक्त विषयों को पूर्णतया परिष्कृत किया गया है। मुक्ति का मार्ग बताया गया है, इत्यादि।	१४५००

निर्वाण-प्रकरण के भी दो भाग—पूर्वार्द्ध निर्वाण व उत्तरार्द्ध-निर्वाण—हैं।

योग-वाशिष्ठ के विविध सिद्धान्तों की पुष्टि ५५ मनोहर कहानियों से की गई है। ये कहानियाँ अत्यन्त मार्मिक व हृदय-ग्राही हैं। बालक, बूढ़े, जवान सभी सुनते अघाते नहीं।

थोड़े में मित्र ! योग-वाशिष्ठ एक अनुपम ग्रंथ है। इसके अध्ययन मननादि से हृदय की उलझन सुलझ पाएगी। रहा-सहा अन्तःकरण का मैल भी धुल जाएगा—ऐसा जी में भासता है। फिर, अन्तःकरण की धुलाई, कब से चालू भी तो है!

मित्र ! जब-तक भगवान् की प्राप्ति नहीं हो जाती तब-तक इतने से ही संतोष रखें कि भगवान् की कृपा कुछ-न-कुछ हम दोनों पर है;—तभी तो, उनके चिन्तन में लगे हैं। प्राप्ति उनकी अवश्य होगी! मित्र! कस कर उनका पल्ला पकड़े रहें।

अच्छा! एक बात, मैं आप से पूछूँ?—क्या गीतामृत और कठोपनिषद्-प्रकाश की रचना के बाद भी आप को भगवान् का आभास नहीं मिला? आखिर, इनकी रचना कौन करा रहा है? कौन इन्हें इतना लोकप्रिय बना रहा है? मैं कौन-सा कालेज में पढ़ने गया था? और कहीं भी, कब और किससे पढ़ा था?

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मित्र ? मेरे––आपकी आड़ में खुद भगवान् ही सब कर-करा रहे हैं। आप भटकते न रहिए।

अगले पत्र में प्रथम-प्रकरण-वैराग्य की चर्चा की जाएगी। इसके पहले, आइए, उस निराकार, पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर का स्मरण करें। उनकी सत्ता, जर्रे-जर्रे (कण-कण) में देखने का अभ्यास करें। पर किससे ? आँख से ! नहीं-नहीं हृदय से। भगवान् की ज्योति, उनकी वाणी-सीधी हृदय में आती है। चमक-चमक–गुन-गुना-गुन-गुना जाती हैं। क्या आप को कुछ नहीं मालूम होता ? शायद, उन्हें मंदिर, मस्जिद और गिरजे में ही पाने का प्रयास आप की ओर से हो रहा है !

मित्र ! वे बन्दी नहीं हैं। वे तो विश्वमय हैं। आप उन्हें अपने हृदय के भीतर ही देखें।

आइए, उनकी वंदना करलें––

जय जय अविनासी सब घट वासी व्यापक परमानंदा।
अविगत गोतीतं चरित पुनीतं माया रहित मुकुंदा॥
जेहि लागि विरागी अति अनुरागी विगत मोह मुनिवृंदा।
निसिवासर ध्यावहि गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानंदा॥
जेहिं सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई संग सहाय न दूजा।
सो करउ अघारी चिंत हमारी जानिअ भगति न पूजा॥

(तुलसीकृत रामायण से)

जो अविनाशी हैं––सदा एक-सा रहने वाले हैं––सदा सब के हृदय में बसने वाले हैं, सब कुछ जानने वाले हैं––सब में व्याप्त हैं; व परम आनन्द की साक्षात मूर्ति स्वरूप ही है; जिनका भेद जाना नहीं जा सकता; जो बुद्धि और समस्त इंद्रियों से परे हैं; जिनका चरित्र अत्यन्त पवित्र है; जो माया से परे हैं और मुक्ति को देने वाले हैं––उस भगवान् की जय हो ! जय हो !!

जिस प्रभु ने अकेले ही, संकल्प मात्र से तीन प्रकार की सृष्टि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रचना की, जो पापों को दूर करने वाले हैं वे भगवान् मेरी सुधि लें। मुझ से तो न भक्ति ही होती है न पूजा ही।

प्रिय मित्र ! कोई-न-कोई प्रार्थना नित्यप्रति अवश्य किया करें। प्रार्थना से अन्तःकरण निर्मल होगा। सच-पूछिए तो प्रार्थना ही आत्मा की खुराक है। लेकिन प्रार्थना करने में वाणी के साथ मन का भी मेल रखें। तभी हम लोगों की प्रार्थना फलवती होगी।

आप सदा स्वस्थ और प्रसन्न रह, पूर्ववत् सत्य मार्ग पर चला करें--यही मेरी एकमात्र कामना है।

पुनः प्रणाम !

आपका आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वैराग्य-प्रकरण

जमशेदपुर

प्रिय मित्र, ३०-१०-६६

सादर प्रणाम !

इधर मोह में पड़े पुत्र की दशा से राजा दशरथ अलग परिशान थे; उधर इसी बीच, महर्षि विश्वामित्र अपने यज्ञ की रक्षा के लिए राम-लक्ष्मण को लेने आ गए। बूढ़े राजा और फेर में पड़े। वशिष्ठ जी ने उन्हें किसी तरह धीरज बँधाया। विश्वामित्र जी को भी संतुष्ट किया। उन्हें भी सत्संग मंडली में सम्मिलित किया।

अब विषय-प्रसंग पर आवें।

राजा दशरथ ज़ी के कहने पर, महर्षि वशिष्ठ रामचन्द्र जी को भरी राज-सभा में समझाने लगे--

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! तू खान-पान आहार-विहार क्यों त्यागते जा रहा है ? तू क्यों खोया-खोया रहने लगा है ? अपने मन की व्यथा, तू मुझ से बता ताकि मैं दूर कर सकूँ। तब रामचन्द्र जी विनीत भाव से बोले—

गुरुदेव ! इस मृत्यु-लोक में मुझे कहीं कोई सुखी नहीं दीखता। सभी जीव दु:खी हैं—तमाम दु:ख ही दुख है। सर्वत्र छल-प्रपंच ही है। सुख तो कहीं भेंटता ही

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

द. नं. ६८४८० वा. वि. पु.

नहीं। मेरा मन संसार से उचट गया है। कहीं भी जी लगता नहीं।

गुरुदेव ! यहाँ के कोई जीव या पदार्थ बराबर टिकने वाले नहीं हैं। एक-सा रहने वाले भी नहीं हैं। जीव का शरीर बढ़ता है, घटता है फिर नाश हो जाता है। पेड़-पौधे-उगते हैं; बढ़ते हैं, बूढ़े होते हैं और देखते-देखते खतम हो जाते हैं। मिट्टी-पत्थरादि-सभी रंग बदलते रहते हैं। इस संसार में सब कुछ क्षण-क्षण बदलता ही रहता है। कोई आगे कोई पीछे सभी विनसते रहते हैं। सब का नामो-निशान मिटता जाता है।

गुरुदेव ! जीवन की दर्द-भरी कहानी कही नहीं जाती है। आयु तेजी से बीतती जाती है। देखते-देखते लड़कपन-जवानी चली जाती है। असहाय बुढ़ापा आता है; और रुला-रुला कर साथ लिए जाता है। यहाँ कोई ठहरता नहीं। कुछ रुकता नहीं।

गुरुदेव ! यहाँ सब के सब, मोह-माया में पड़े घुल रहें हैं। सभी भ्रम में पड़े हैं। भाई-बन्धु, स्त्री, पुत्र आदि जो अपने लगते हैं—कोई अपना नहीं। कोई किसी का नहीं। अपनी इन्द्रियाँ भी अपनी नहीं। ये तो शत्रु की नाईं दुःख ही देती हैं। भ्रमवश जो वस्तु जैसी है, वैसी भासती नहीं। उलटी दीखती है। फिर, किसका भरोसा करूँ ! किसका न करूँ !!

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरुदेव ! काल विकराल है। सब को खाए जा रहा है। सभी जीवों को सभी पेड़ पौधों को—यहाँ तक कि निर्जीव पदार्थों को भी समाप्त किए जा रहा है। यह जवानी के गठीले शरीर को पका कर बूढ़ा कर देता है, फिर नाश कर ही छोड़ता है। धन-दौलत, राज-पाट फिर किस काम के ! सब को छोड़-छाड़ कर जीव चला जाता है। रह क्या जाता है ? काल, चाहे आज-चाहे कल, सब को खा ही जाता है। सब मिट ही जाते हैं।

गुरुदेव ! इस संसार में, सब ओर दुःख निराशा और ग्लानि का ही साम्राज्य है।

भोग वस्तुएँ सभी दुःखदायी हैं। इनसे शुरू में अल्प सुख भले ही मालूम पड़े; अंत में ग्लानि ही होती है। परिणाम बराबर बुरा ही होता है। फिर विष तुल्य भोग्य वस्तुओं को कैसे भोगा जाय ! भोगा ही क्यों जाय !!

वास्तव में, गुरुदेव ! सारे धन-दौलत, राज-पाट क्षणभंगुर हैं। स्त्री आदि की मोहनी सुन्दरता क्षण में नाश होने वाली है। साथ-साथ परिणाम में सब विष के समान हैं। बुद्धिमान पुरुष इनमें क्यों विचरने जाँय।

सब जानते हुए भी जीव इन्द्रियों का गुलाम बना रहता है। उनके इशारे पर नाचता रहता है। भोगों में ही रमा रहता है। निरंतर मोह-जाल में ही फँसा रहता है।

गुरुदेव ! संपत्ति दुःख देने ही आती है। सुख देने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

नहीं आती। यह खोटे कामों से ही प्राप्त होती है। आते-आते बुद्धि हर लेती है। जैसी क्षण भंगुर और दुःखदाई है—वैसी प्रतीत नहीं होती। यह कामिनी की तरह अत्यन्त मधुर एवं मोहक भासती है। किन्तु फल में विष-तुल्य है। लक्ष्मी (धन) प्राणी को मदाँध बनाए बगैर नहीं छोड़ती। यह सहृदय को निष्ठुर और सरस को नीरस बना देती है। तरह-तरह के घातक भोगें भोगाती हैं। चित्त को डाँवा-डोल किए रहती है। यह सुख की नींद कभी सोने नहीं देती। गुरुदेव ! मुझे तो संपत्ति घिनौनी लगने लगी है।

गुरुदेव ! जीव की आयु जन्म के साथ-साथ घटने लगती है। प्रतिदिन, प्रतिपल क्षीण होती जाती है। क्षण-क्षण बीतती-बीतती बीत जाती है। जीव संसार से उठ जाता है। फिर-फिर जन्मता और मरता रह-जन्म-मरण का दुःसह दुःख सहता रहता है। यही जीवन-लीला है।

गुरुदेव ! विविध प्रकार के भोग क्षणिक इन्द्रिय सुख ही जन्म मरण के कारण हैं। बिना इनके त्यागे, न मुक्ति मिलेगी न दुःखों का अन्त होगा।

गुरुदेव ! मन बहुत चंचल है। कहीं टिकता नहीं। यहाँ-वहाँ, देश-विदेश, दौड़ लगाता रहता है। जिस पर लुभाता है—उससे उबता भी है। लुभाते जाना, ऊबते व छोड़ते जाना ही इसका बराबर का काम है। विषयों में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इसकी लिप्सा निरंतर बनी रहती है। उन्हीं की ओर खिचा-खिचा रहता है। यह तो प्राणी को तबाह किए रहता है। एक क्षण भी चैन नहीं लेने देता।

गुरुदेव ! तृष्णा तो और सताती रहती है। यह कभी तृप्त नहीं होती। बराबर कुछ-न-कुछ पाने की चाह जगाती रहती है। प्राप्ति में विलम्ब होने से चित्त को विचलित करती है। बुढ़ापे में तो यह और जोर पकड़ती है। इधर बुढ़ापे में केश पक-पक कर सफेद होने लगते हैं, दाँत गिरने लग जाते हैं; शरीर के अंग-अंग ढीले पड़ने व शक्तिहीन होने लगते हैं; उधर तृष्णा और बलवती होने लगती है।

देह थकती-थकती थक जाती है। भोगों को भोगने की शक्ति रह जाती नहीं। भोग भोगे जाते नहीं। तृष्णा जान छोड़ती नहीं। इससे जीव की बड़ी दुर्गति होती है।

गुरुदेव ! न जाने क्यों ? लोग देह से इतनी ममता करते हैं। यह तो हाड़-माँस-रक्तादि से ही बनी है। जो देह आज सुन्दर व गठीली दीखती है—वही कल बदसूरत और कमजोर हो जाती है। इसमें अनेकों रोग हो जाते हैं। चमड़ी बदन को छोड़ लटक जाती है। अंग-अंग सिकुड़ जाता है। चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं। लुभानी सूरत डरावनी हो जाती है।

प्रिय मित्र ! एक ही व्यक्ति के भिन्न-भिन्न काल—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शैशव, बालपन, किशोर, जवानी और बुढ़ापे—के फोटो देखने से अजीबसा लगता है। नन्हासा मनमोहक शिशु, बढ़ता-बढ़ता जवान और बूढ़ा हो जाता है। आप अपने ही फोटो को देखिए न !

श्री रामचन्द्र जी आगे बोले—

गुरुदेव ! प्राणी जब तक बालक रहता है—अपनी हर जरूरत के लिए दूसरे पर निर्भर करता है, वह असहाय रहता है। उसे भूख लगती है; पर बोल नहीं सकता। माँग नहीं सकता। रुदन करता है। तब कहीं उसकी भूख बुझाई जाती है। वह रोग-दुःख सब कुछ—जो उस पर गुजरता है—सहता है। रोता है—बिलपता है—किन्तु बता तक नहीं सकता। कितनी दयनीय अवस्था है बचपन की !

गुरुदेव ! जीवन में जवानी, चन्द दिनों के लिए ही बिजुली की नाई, दम-दमाती व कड़कती हुई आती है। आते-आते यह जीव को मदाँध कर देती है। उसकी शुद्ध बुद्धि को भी मलीन कर देती है। फिर उसे भ्रमाने लगती है। यह जोरों की आँधी की तरह आती है और उसकी तरह ही चली जाती है। यह अवस्था तो और भयानक है। अतएव मुझे जवानी भी नहीं भाती और बुढ़ापे की दुर्दशा की कल्पना से ही जी दहलता है।

गुरुदेव ! थोड़े में, मैंने अपने मन की व्यथा बतला दी। काम, क्रोध, मद, लोभ, राग-द्वेष, तृष्णादि से बचने की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

युक्ति बतलाइए । मेरा मोह-भ्रम दूर कीजिए । मेरा चित्त अत्यन्त व्यग्र और अशांत हो रहा है । आप अपने वचनामृत से इसे शांत कीजिए । मुझे मुक्ति का मार्ग बतलाइए । मुझे संसार-सागर से पार उतारिए ।

राज-पाट, ऐश आराम मुझे कुछ नहीं भाते । मैं आत्म-ज्ञान के लिए तड़प रहा हूँ । मुझे आत्म-ज्ञान का उपदेश दीजिए ।

तब महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! अज्ञान ही संसार के समस्त दुःखों का कारण है । ज्ञान से ही उसका नाश है । आत्म-ज्ञान से ही परम सुख व परम शांति की प्राप्ति होती है । कल्प के शुरू में आत्म-ज्ञान के जो उपदेश मुझे स्वयम् ब्रह्मा से मिले थे ।— वही मैं तुझसे कहूँगा । तू घबड़ा मत । बेकार शोक मत कर । तेरे संस्कार उत्तम हैं । तेरी बुद्धि तीव्र व निर्मल है । तू आत्म-ज्ञान का जिज्ञासु और भागी है । थोड़े उपदेशों से ही तुझे आत्म-ज्ञान हो जाएगा । तू मन-मार न बैठ । आत्म-ज्ञान हुआ ही जान । उठ प्रसन्न रह नित्य- कर्म में लगा रह ।

प्रिय मित्र ! थोड़े में बैराग्य प्रकरण की चर्चा समाप्त हुई । रामचन्द्र जी से ज्ञान-भरी वैंराग्य की बातें सुन सभा-मंडली बहुत प्रसन्न हुयी ।

इस प्रकरण में नारियों की और उनकी देह की बड़ी भर्त्सना की गई है । वे काली नागिन की तरह पुरुष को डसने वाली, विषवेलि की भाँति लिपटते ही प्राण हर लेने वाली, और पुरुषों को बंधन में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

डालने वाली बतलाई गई हैं। प्रिय भासने वाली उनकी देह हाड़-मांस-रक्तादि से बनी एक पिटारी मात्र है। वह मल-मूत्र आदि से भरी दुर्गंधमय है—आदि-आदि बातें विस्तार में कही गई हैं। उनसे पिंड छुड़ाने की नेक सलाह दी गई है।

लेकिन मित्र ! जैसी पुरुषों के लिए नारियाँ हैं—नारियों के वैसे ही पुरुष हैं। वे काली नागिन मर्दों के लिए हैं तो वे काले नाग हैं औरतों के लिए। दोनों एक दूसरे को फिसलाने वाले हैं और बंधन में डालने वाले हैं। फिर सारा दोष स्त्री के ही माथे मढ़ा जाना उचित नहीं जँचता। और देह तो दोनों की एक ही प्रकार के तत्त्वों—हाड़, मांस, मज्जा, रक्तादि-से बनी है।

जन्मदात्रि नारी की भर्त्सना मुझे गँवारा नहीं होता। ये तो वात्सल्य, स्नेह, ममता और दया की साक्षात् मूर्ति हैं। सेवा ही इनका धर्म हैं। अपनी संतति के सुख-समृद्धि के लिए मर मिटना ही इनके जीवन का व्रत है।

घर बसाने वाली ये हैं। उसकी शोभा ये हैं। शुष्क जीवन को भी सरस बनाने वाली ये हैं। पुरुषों में प्रेरणा व शक्ति संचार करने वाली ये हैं। जीकर, जीने के लिये उपादेय (साधन) ये हैं। मर कर जीने के लिए इनकी विरक्ति जरूर अवलम्बन है। सच पूछिए तो सब कुछ होते हुए भी एक इनके बिना सब कुछ फीका है।

मित्र ! शुरू से ही नारियों के लिए, मेरे दिल में अथाह श्रद्धा रही है। इन में मेरी स्नेहमयी माँ की मूर्त्ति झलकती हैं। मेरा सिर इनके सामने अनायास झुकता है। ये मेरी पूजा की प्रतीक हैं। ग्रथों में जगह-ब-जगह इनकी निंदा पाकर, दिल में चोट लगती है। हिन्दू धर्म-ग्रन्थों में बहुत स्थानों में नारियों की चर्चा में उनके साथ न्याय नहीं वर्ता गया है—ऐसी मेरी अपनी धारणाहै।

प्रिय मित्र ! अगले पत्र में मुमुक्षु प्रकरण की चर्चा की जाएगी। योग-वाशिष्ठ में कुछ शब्द विशेष अर्थ में व्यवहृत हुए हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उनका अर्थ शुरू में ही दे देने से आगे के विषय समझने में सुविधा होगी ।

आत्म-बोध
आत्म-ज्ञान
आत्म-दर्शन — आध्यात्मिक ज्ञान, आत्मा का ज्ञान, आत्मा की जानकारी, जीव आत्मा है—शरीर नहीं है । शरीर तो आत्मा का अस्थायी निवास-स्थान है— आदि का बोध हो जाने की ही, आत्म-बोध, आत्म-ज्ञान तथा आत्म-दर्शन कहते हैं ।

आत्म-चिन्तन—ध्यान व चिन्तन से आत्मा-परमात्मा का आभास पाकर, ब्रह्म रूप बन जाना । यह ज्ञान मार्ग का विषय है और मोक्ष-प्राप्ति का एक साधन है । वशिष्ठ जी आत्म चिन्तन से ही जीवन-मुक्त हुए थे ।

प्राण-चिन्तन—प्राण-निरोध । प्राण की गति के रोकने की यौगिक क्रियाएँ । प्राण चिन्तन द्वारा प्राण की गति को रोककर साधक गण मन को वश में करते हैं । मन के वश में होने से आत्म-बोध हो जाता है । जीवन मुक्ति मिल जाती है। काक भुशुण्डि जी ने प्राण-चिन्तन द्वारा ही जीवन मुक्ति प्राप्त की थी ।

आत्म-तत्व—आत्मा की जानकारी ।

आधि-व्याधि—आधि माने मानसिक पीड़ा और व्याधि माने शारीरिक पीड़ा ।

आत्म सात्—अपने अधिकार में, अपना, निजी

एक सात्—एक हो जाना

ब्रह्म के साथ एक सात् हो जाना—ब्रह्म में ऐसे मिल जाना जैसे निर्मल जल-निर्मल जल में मिल कर एक हो जाता है ।

निर्विकल्प—विकल्प से रहित । बिलकुल एक पर स्थिर हो जाना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जैसे समाधि की अवस्था में केवल एक ही ब्रह्म पर एक-मात्र ध्यान केन्द्रित हो जाता है।

फुरना--फैलना, फड़कना, उदय होना। मन का फुरना माने मन का संकल्प विकल्प करना।

संकल्प—विचार, दान-पुण्य अथवा देवकार्य शुरू करने के पहले दृढ़ निश्चय या विचार का प्रकट करना।

संकल्प-विकल्प करना—विचारों को उदय व अस्त करना, विचार लाना व परित्याग करना।

समाधि—मन को एकाग्र करना। किसी एक विषय पर मन को केन्द्रित करना, ब्रह्म चिन्तन में पूर्ण लीन होना। योग की अंतिम अवस्था।

ब्रह्म विद्या--वह विद्या जो ब्रह्म का ज्ञान करावे। इसी को राज विद्या भी कहते हैं।

मुमुक्षु—वह जो मुक्ति की कामना करता है।

उपशम-ज्ञानेद्रियों का नियत्रंण, निवृत्ति, रोक, शांति

मुक्ति / **मोक्ष** — आवागमन के चक्र से आत्मा का छुटकारा पाना। पुनर्जन्म से बचजाना,

निर्वाण—माया या प्रकृति से मुक्ति पाकर परमात्मा से मिलन, सांसारिक जीवन से व्यक्ति का पूर्ण निर्वाण, बौद्धों की मोक्ष-प्राप्ति सदा के लिए विश्राम।

जीवन मुक्ति / **विदेह मुक्ति** — जीवन काल में ही परमात्मा में अविचल रूप से मन का ऐसा लीन हो जाना कि ब्रह्म के सिवा और कुछ भासे ही नहीं—जीवन मुक्ति कहलाता है। मरने के बाद आत्मा का परमात्मा में मिल जाना विदेह मुक्ति कहलाता है। जीवन मुक्त, विदेह मुक्त होकर पुनर्जन्म तर जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

योग—गंभीर भाव चिन्तन, परमात्मा चिन्तन, मन का संकेन्द्रीकरण, चित्तवृत्तिनिरोध, वे सभी साधन जिनके द्वारा मानव आत्मा, पूर्णरूप से परमात्मा में मिल जाय और इस प्रकार मोक्ष की प्राप्ति हो जाय। किसी भी कार्य-सिद्धि के लिए किए, कायिक, वाचिक व मानसिक कर्म, योग कहलाते हैं।

ज्ञान बन्धु—जो प्राणी शास्त्रों का पठन-पाठन व चर्चा एक मात्र जीविकोपार्जन या यश के लिए करता है—लेकिन उनके अनुसार आचरण नहीं करता है—वह ज्ञान बन्धु कहलाता है। ज्ञान बन्धु से अज्ञानी ही अच्छा कहा गया है।

वैराग्य—सांसारिक वासनाओं व इच्छाओं का अभाव सांसारिक बंधनों से उदासीनता, विरक्ति।

ज्ञान दिव्य
दिव्य दृष्टि } आत्म-बोध हो जाने पर, सिद्ध प्राणियों में एक अलौकिक दैविक शक्ति आ जाती है जिसके फलस्वरूप वे गुप्त बातें, दूसरों के मन को रहस्यादि बिना बताए ही जान जाते हैं। उनके लिए कुछ भी अनजान नहीं रह जाता। वे भूत, भविष्यत और वर्त्तमान तीनों काल के ज्ञाता हो जाते हैं। यह दिव्य ज्ञान कहलाता है। वैसे ही समस्त विश्व को एक स्थान से ही देखने की शक्ति उन्हें प्राप्त हो जाती है और दृष्टि से परे वस्तुओं को भी वैसे ही प्रत्यक्ष देखते हैं—जैसे आँख के सामने की चीजों को। यही दिव्य दृष्टि कहलाती है।

प्रिय मित्र! जिन-जिन आध्यात्मिक शब्दों का अर्थ मैंने गीतामृत और कठोपनिषद्-प्रकाश में दिया है—उनका यहाँ नहीं दिया। असल में मेरी रचनाएँ एक दूसरे पर आधारित हैं। जिस प्रकार

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विद्यार्थी और परीक्षार्थी भिन्न-भिन्न नोटादि तैंयारकर पढ़े विषयों की जानकारी प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार मैं अपनी रचनाओं के माध्यम से करता हूँ। अपने को तथा आप को आध्यात्मिक गूढ़ ग्रंथों को समझने के लिए तैयार कराता जाता हूँ। अच्छा होगा कि मेरी सभी रचनाएँ पास रख—सिलसिलेवार अध्ययन करें। मेरे अपने विचार भी जो पहले में हैं वे दूसरे में ही नहीं है और जो दूसरे में है—वे तीसरे में नहीं रहेंगे। इत्यादि।

मुमुक्षु प्रकरण की चर्चा अगले पत्र में की जाएगी। तब-तक आप पिछले सभी पत्रों को पढ़ व गुन कर आगे के लिए तैयार हो जांय। ऐसा न हो कि कहीं पीछे पड़ जांय और फिर, अक-बकाने लगें। कही ऐसा भी न हो कि क्या जल्दी पड़ा है! कल पढ़ा जाएगा! तब-तक अगला पत्र भी पहुँच जाय। और कहीं आलस जी से यारी हो गई तो फिर क्या पूछना! तब तो पूरे पत्र पढ़े भी शायद ही जा सकें।

प्यारे मित्र! एक तो यों ही मानव की आयु कम है। साथ-साथ क्षण भगुर भी है। कभी भी स्हठात् खत्म हो सकती है। फिर, हमारी आपकी तो बहुत बीत भीं चुकी है। थोड़ी बची-खुची भी व्यर्थ न जाय! क्षण-क्षण सत्कर्म में लगते जाँय!

जीवन, खुशी के साथ हँसते-हँसते जीने के लिए है। अतएव, हर परिस्थिति में, मुस्कुराते रह, शेष जीवन-यात्रा समाप्त करें।

मेरी हर शुभकामनाएँ एवं प्रेमोद्गार ही आप के लिए, मेरे सूक्ष्म उपहार हैं। इन्हें अपने दिल के किसी कोने में रख रखें। सच पूछिए, तो इससे ज्यादा कीमती उपहार, आपके लिए, मुझे और कुछ जँचता हीं नहीं। यह सृष्टि ही प्यार में पलीं है और प्यार पर ही टिकी है। प्यार के परे सृष्टि की कल्पना तक नहीं की जा सकती।

मैंने खूब सोचा हैं। आप भी विचारिए। और मेरी बात

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मानिए, तो हृदय से निर्मल प्रेम-धारा को निरंतर बहने दीजिए, सबको जी-भर पान करने दीजिए। इसी में सभी धर्म निहित हैं। यही सभी धर्मों का सार है।

अच्छा ! मुझे विदा दें और अगले पत्र की प्रतीक्षा करें।

पुनः प्रणाम !

आप का आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मुभुक्षु-प्रकरण

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**
१८-११-६६
सादरप्र णाम ! **चार बजे भोर**

पिछले पत्र में वैराग्य प्रकरण की चर्चा हो चुकी है। आज मुमुक्षु प्रकरण की बारी है।

वैराग्य-प्रकरण में, रामचन्द्र जी ने वैराग्य की बातें, इतने मार्मिक ढंग से कहीं कि संपूर्ण सत्संग-मंडली गद्गद् हो गयी। सब के मन की वासनाएँ कम-से कम उस समय के लिए दूर हो गईं। सब के सब रामचन्द्र जी की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे।

सभा में बैठे महर्षि विश्वामित्र बोले—

प्रिय राम ! जो कुछ जानने योग्य है — तू सब जान गया है। कोई नयी बात तुझे बतानी नहीं है। कोई नया ज्ञान देना भी नहीं है। फिर भी शुकदेव जी तरह कुछ गुरु उपदेश की जरूरत है।

तब रामचन्द्र जी बोले—

हे मुने—शुकदेव जी का वृत्तान्त मुझे सुनाइए। महर्षि विश्वामित्र बोले—

शुकदेव जी की कथा

प्रिय राम ! ब्रम्ह-ज्ञानी महर्षि व्यासदेव के पुत्र शुकदेव जी की बुद्धि तेरी ही जैसी तीव्र और निर्मल थी। वे भी तेरी ही तरह जानने योग्य सब कुछ जान गए थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

फिर, भी उन्हें शांति नहीं मिली थी। एक दिन, उन्होंने अपने पिता व्यासदेवजी से अपने मनकी व्यथा बतलाई।

तब महर्षि व्यासदेव बोले—

प्रिय पुत्र ! सब कुछ जानने के बाद भी तुझे आत्म-बोध हुआ—नहीं लगता। कुछ गुरु उपदेश की जरूरत है। मैं तेरा पिता हूँ। मेरी बातों में तुझे पूर्ण प्रतीति न भी हो सकती है। अच्छा होगा कि तू ब्रम्ह-ज्ञानी राजा जनक के पास जा और उनसे आत्म-तत्व का उपदेश ले।

महर्षि वशिष्ठ कहते गए—

प्रिय राम ! पिता जी के कहने पर, शुकदेव जी राजा जनक की राजधानी जनकपुर गए। द्वारपालों ने उनके आने की खबर राजा जनक को दी। राजा जनक को दिव्यदृष्टि और दिव्यज्ञान प्राप्त थे। इससे वे शुकदेव जी के आने का आशय बिना बताए ही जान गए थे। उन्होंने द्वारपाल से कहा कि—"शुकदेव जी को द्वार पर ही खड़े रहने दो।"

ऐसा ही हुआ। **प्रिय राम !** बेचारे शुकदेव जी सात दिनों तक दरवाजे पर ही पड़े रहे। लेकिन इसका असर उनके चित्त पर कुछ न हुआ। वे एक-सा प्रसन्न मन बने रहे।

उधर भीतर ही भीतर राजा जनक जी पता करते रहे। सात दिनों के बाद उन्होंने शुकदेव जी को राज

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

महल में रखवा दिया और सभी प्रकार के भोगों का प्रबन्ध करा दिया ।

अब, शुकदेव जी, एक से एक सुन्दर और युवती स्त्रियों से घिरे रहने लगे । सभी प्रकार के उपलब्ध भोग, सात दिनों तक भोगते रहे । लेकिन जिस प्रकार, सात दिनों तक द्वार पर पड़े रहने से उन्हें कुछ भी दुःख न हुआ था, उसी प्रकार भोगों से खुशी भी न हुई । भोग-वस्तुओं से न उन्हें घृणा ही हुई और न उनकी प्राप्ति और उपयोग से प्रसन्नता ही । वे बिलकुल शांत चित्त बने रहे ।

तब राजा जनक जी शुकदेव जी को बुलाकर बोले—पूज्य ब्राह्मण देवता ! बिना बताए ही आप के आने का आशय मैं जान गया था । सात दिनों तक द्वार पर ही बिना किसी आदर सत्कार के रख और उतने ही दिन, महल में भोगों के बीच रख कर, मैंने आप के चित्त की स्थिरता की परीक्षा ली । आप सोलह आने खरे निकले । संसार में जो कुछ जानने योग्य है—सो सब कुछ आप जान गए हैं । साथ-साथ, आप को भोगों से भी विरक्ति है । तृष्णा आप की मरी हुई है ।

आप आत्म-ज्ञान हुआ ही जानिए । वासना [अप्राप्त वस्तुओं की प्राप्ति की कामना] तथा भोगों के भोगने की तृष्णादि से ही—यह संसार भासता है । वासना के लोप होते ही संसार का भी लोप हो जाता है । तब सब कुछ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मन का ही विस्तार प्रतीत होनेलगता है। भगवान ही सर्व शक्ति मान हैं; सदा एक-सा रहने वाले. हैं; सब में एक उनकी ही ज्योति जल रही है; तथा न उनसे परे ही कुछ है और न उनके बिना ही; यह संसार जो सत्य भासता है; निरा मन की कल्पना मात्र है, आदि का आभास मिलते ही परमानन्द की प्राप्ति हो जाती है। फिर जीव को दुःख काहे का !

ब्राह्मण देवता ! आप अपने स्थान को लौट कर, कुछ और साधना कीजिए। आप को आत्म-बोध होते देर नहीं लगेगी।

प्रिय राम ! तब शुकदेव जी मेरू पर्वत पर लौट कर भगवान् के स्थित्व का आभास पाने की चेष्टा करने लगे। थोड़े ही समय में, उन्हें आत्म-बोध हो गया। वे जीवन मुक्त हो निमग्न हो गए।

प्रिय राम ! तुझे भी शुकदेव जी की तरह महर्षि वशिष्ठ के अल्प उपदेश से ही आत्म- बोध हो जायगा। तुझे चिर शांति मिल जायगी। तू जरा भी चिंता न कर। आगे महर्षि वशिष्ठ का उपदेश श्रवण कर ज्ञान लाभ कर।

प्रिय मित्र ! शुकदेव जी के ज्ञान प्राप्ति की वार्त्ता समाप्त हुई। आगे महर्षि वशिष्ठ जी रामचन्द्र जी को उपदेश देंगे—जिसकी चर्चा अगले पत्र में होगी अन्यथा पत्र बहुत लम्बा हो जाएगा। फिर आप को पढ़ने में विशेष भार पड़ेगा।

आप ने देखा न ! शुकदेव जी न अपमान से विलखे न मान से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हरषे। मान-अपमान दोनों में उनका चित्त अविचलित रहा। साथ-साथ भोगों में न प्रीति ही हुई न अप्रीति ही। सहज भाव से भोगों को भी भोगते गए। भोगने का असर मन पर जरा भी न पड़ा।

जीवन, **मित्र** ! ऐसा ही होना चाहिए। जो कुछ प्राप्त हो, भगवत्-इच्छा समझ उसे भोगते जाना चाहिए। प्राप्त भोग वस्तुओं को हठ पूर्वक त्यागने से और अप्राप्त के पीछे दौड़ने से चित्त विचलित ही होगा। आप खुद भी विचार कर देखिए। हठ पूर्वक त्यागने के प्रयास का ही त्याग कीजिए। एक-एक कर त्यागते-त्यागते कहीं मेरे त्याग की भी बारी न आ जाय। इसमे आप के त्यागने की आदत से मैं थोड़ा भय खाता हूँ।

प्रिय मित्र ! जो प्राणी साधना में आप तक न पहुँचे हैं—उनके लिए मेरी उपर्युक्त बातें उपयुक्त न होंगी। वे तो उलटा माने लगा अनाप-सनाप बरतने लगेंगे। कुकर्म में लग जाएँगे। हर सठे, सब से ये गूढ़ ज्ञान की बातें न कहिएगा।

हम दोनों की साधना भगवान पूरी करें! सारे विश्व का कल्याण करें!! हर घर फूले-फले, हर प्राणी सुखी रहे—यही मेरी कामना है।

सप्रेम सादर प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मुमुक्षु-प्रकरण

जमशेदपुर
प्रिय मित्र ! १६-११-६६
सादर प्रणाम ! १२ बजे रात

पिछले पत्र में, महर्षि विश्वामित्र जी ने श्री रामचन्द्र जी को शुकदेव जी की ज्ञान-प्राप्ति की वार्त्ता सुनाई है। आगे विश्वामित्र जी ने महर्षि वशिष्ठ से उपदेश देने लिए निवेदन किया।

तब वशिष्ठ जी बोले—

प्रिय राम ! प्रथम तू मेरी अनोखी जीवन कहानी सुन—

वशिष्ठ जी की उत्पत्ति-कथा

संसार की रचना करने के कुछ काल बाद, ब्रह्मा जी ने यहाँ के जीवों को अत्यन्त दुःखी देखा। सब को माया मोह में फंस कर, जन्म-मरण के चक्र में पिसते देखा। उन्हें बड़ी दया आई। दुःखों से बरी करने का उपाय ढूँढ़ने लगे। अंत में उन्हों ने आत्मज्ञान का उपदेश देने का निश्चय किया; जिसके लिए एक व्यक्ति की जरूरत पड़ी। फिर, क्या था ! उनके मन में विचार उठते ही मेरी उत्पत्ति हो गई। मैं लगोटी पहने व कमण्डल लिए हठात् उनके सन्मुख खड़ा हो गया।

प्रिय राम ! ब्रह्मा के मन से मेरी उत्पत्ति हुई-इससे मैं उनका मानस-पुत्र कहलाया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेरे पिता ब्रह्मा ने कहा—प्रिय पुत्र ! लोक-हित ही तुझे मैंने अभी जना है। संसार के लोग बड़े दुःखी हैं। उनका दुःख आत्म-ज्ञान से ही दूर होगा। मैं तुझे आत्म-ज्ञान का उपदेश देता हूँ। तू इसे इसके जिज्ञासुओं को सुना कर, उनका कल्याण किया करना।

इतना कह, मेरे पिता-ब्रह्मा ने मुझे आत्म-ज्ञान का उपदेश दिया। मुझे आत्म-बोध हुआ। तब से, पिता की आज्ञा से मैं संसार में विचरता रहा हूँ। जिस किसी को आत्म-ज्ञान की जिज्ञासा होती है—उसे मैं ब्रह्मा से प्राप्त, ज्ञान का उपदेश दिया करता हूँ। फलतः जिज्ञासु आत्म-ज्ञान प्राप्त कर सांसरिक क्लेशों को तर जाता है। उसे आत्मानन्द की प्राप्ति हो जाती है। इस प्रकार से अब-तक मेरे द्वारा दिए गए ब्रह्मा के उपदेश से असंख्य-जन तर गए।

प्रिय वत्स राम ! तू निश्चय ही आत्म-ज्ञान का भागी है। ब्रह्मा से प्राप्त, उपदेशों को तू मुझ से सुन, आत्म-बोध प्राप्त कर। तू अवश्य ही सब दुःखों को तर जाएगा और जीवन मुक्त-हो संसार में स्वच्छन्द विचरेगा।

प्रिय मित्र ! इतना सुनकर श्रीराम चन्द्र जी बोले—

गुरूदेव ! उपदेश दीजिए। मैं सुनने के लिये लालायित हूँ।

प्रिय मित्र ! अब यहीं से वशिष्ठ जी के गूढ़ ज्ञान का उपदेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शुरू होता है। आप शुद्ध मन से पढ़ते व गुनते जाइए। यहीं से ज्ञान-सागर में प्रवेश समझिए। डूबकी लगाने के लिए, तैयार हो जाइए। आँख कान-नाक और मुँह बन्द कर ही, गहरा गोता लगाना होता है।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि हम लोग बुरी वस्तु देखना, बुरी बात सुनना, बुरी चीज सूंघना, और चखना एक बारगी छोड़ दें तभी ज्ञान-सागर में प्रवेश हो सकेगा। आत्म-बोध रूपी रत्न तभी प्राप्त हो सकेगा। अध्यात्म-पथ के मेरे प्यारे साथी ! आगे विषय बड़े गूढ़ हैं। सब तरह से अपने को संभाल लीजिए। मैं आगे बढ़ता हूँ। समझने में कुछ कठिनाई होने से मेरे प्यारे दोस्त ! घबड़ाइएगा नहीं ! आगे चल कर सब कुछ स्पष्ट हो जाएगा।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! एक-एक कर, मैं तेरी सभी शंकाओं का समाधान करता हूँ। तू पूर्ण रूप से चित्त एकाग्र कर सुन !

वत्स ! यह संसार भ्रमवश ही भासता है। वास्तव में यह उपजा ही नहीं। यह मन के संकल्प मात्र से बना है। संकल्पों के क्षीण होते ही इस संसार का लोप हो जाता है।

वत्स ! निरा ब्रह्म ही एक मात्र सत्य है। वही सदा से रहने वाला है। उसी का आदि-अंत नहीं है। वही निर्विकार है। वही सत्-चित्त-आनन्द है। उसी की ज्योति सब में जल रही है। वह खुद अशरीरी है—निरा ज्योति पुञ्ज है। सारा विश्व उसका ही फैलाव है—सो कैसे ?—वह, आगे समझेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हर जीव अपनी-अपनी भावना के अनुसार अपनी-अपनी सृष्टि रचता है। भावनानुसार ही भिन्न-भिन्न योनियों मे जन्मता है।

प्रिय मित्र ! जीवन में, भावनाओं का बहुत बड़ा महत्व है। जिसकी जैसी भावना रहती है, उसे यह संसार वैसा ही भासता हैं। दूषित भावना वाले को सर्वत्र दोष ही दीखता है। फलतः वह खुद बुरा हो जाता है। अच्छी भावना वाले को सर्वत्र अच्छाई ही दीखती है। वह स्वयम् अच्छा बना रहता है। दूषित और शुद्ध भावनाएँ, क्रमशः लाल और हरे चश्मे की तरह हैं। लाल चश्मा में सब कुछ लाल ही दीखता और हरे में सब कुछ हरा ही। अतएव मित्र ! गंदी भावनाओं से बचने का हर कोशिश करें।

महर्षि वशिष्ठ जी आगे बोले—

प्रिय राम ! मानव-जीवन का एक मात्र उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है। मोक्ष के बिना शाश्वत [सदा रहने वाला] सुख नहीं मिलता। इस मोक्ष की प्राप्ति के मुख्य साधन-शम (चित्त शांति), विचार, संतोष और साधु-संगति है। मोक्ष रूपी महल के दरवाजे के ये चार-शम, विचार, संतोष और साधुसंगति—पहरेदार रूप हैं। बिना इनकी मरजी के मोक्ष रूपी महल में प्रवेश नहीं हो सकता। अतएव मुक्ति के लिए इनसे दोस्ती जरूरी है।

साधना के शुरू में अगर चारों को एक साथ मित्र न बना सकें तो कोई बात नहीं, तीन को ही बना लें। तीन को भी न बना सकें तो दो को ही बना लें। अगर कहीं दो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

को भी न बना पावें तो एक को तो जान की भी बाजी लगा कर अवश्य मित्र बनावें। इन चारों—शम, विचार, संतोष और साधु-संगति—का संबंध अटूट है। किसी एक को अपनाने से बाकी तीन खुद-ब-खुद आ जाते हैं। अर्थात् शम, विचार, संतोष और साधु-संगति में किसी एक को भी आचरण में लाने से शेष तीन आप से आप जीवन में उतर जाते हैं।

प्रिय राम ! इन चारों के बारे में आगे तू अलग-अलग सुन—

शम की प्राप्ति से, साधक सुख-दुःख में एक सा बना रहता है। न खुशी में इठलाता है; न गम में अकुलाता है। हर परिस्थिति में उसका मन अविचलित रहता है। जन्म-मरण, हार-जीत, मान-अपमान, मिलन-बिछुड़न आदि में उसका मन कतई चलायमान नहीं होता।

प्रिय राम ! शम युक्त प्राणी की दृष्टि सब पर एक-सी पड़ती है। जीवन के सभी प्रकार के व्यापारों में उसके व्यवहार, दृष्टि, वाणी, आचरणादि से सब के प्रति प्रेम टपकता है। बड़े-छोटे का, उच्च-नीच का, बुरे-भले का, धनी-गरीब का, सुन्दर-असुन्दर आदि का भेद-भाव उसमें तनिक भी नहीं रहता।

प्रिय राम ! शम युक्त प्राणी के निश्चल, निस्वार्थ और समान वर्ताव से शत्रु भी मित्र बन जाते हैं। उसकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दृष्टि में कोई भी शत्रुरूप नहीं दीखता। उसे तो सभी मित्रवत् ही प्रतीत होते हैं।

शमवान् व्यक्ति अपनी जीवन-यात्रा अपने नियत कर्मों को सहज भाव से करता हुआ समाप्त करता है। अपने मन को वह कभी भी विचलित नहीं होने देता।

प्रिय मित्र ! शम युक्त ज्ञानी को भी सरदी-बुखार होते हैं। उसके भी अपने लोग मरते हैं। उस पर भी अकस्मात् विपत्ति पड़ती है। उसे भी कष्ट झेलने पड़ते हैं। अन्तर सिर्फ इतना ही है कि उसके चित्त पर इनका असर जरा भी नहीं पड़ता। उसके लिए, ये बाहरी चीजें हैं। बाहर से आये और बाहर-से-बाहर चले गए। उसके अन्त: करण तक, ये पहुँच नहीं पाते। बड़ी से बड़ी खुशी तक की भी वहाँ पहुँच नहीं होती। इससे उसका अन्त: करण नितान्त शांत बना रहता हैं। उसे दुनिया की कोई भी ताकत हिला-डुला नहीं सकती। ब्रड़ी से बड़ी घटना भी उसे बिचलित नहीं कर पांती। ऐसी है स्थिति, मित्र ! शम युक्त प्राणी की। आवें शम से भूषित होने का अथक प्रयांस करें।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! मोक्ष-प्राप्ति का दूसरा साधन-विचार है। विचार ही से जीव को भले-बुरे की, पाप-पुण्य की, कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य आदि की जानकारी होती है। जिसकी विचार शक्ति क्षीण हो जाती है, उसे कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य आदि का ज्ञान नहीं रहता है। विचार हीन, व्यक्ति बिना पतवार की नौका की तरह होता है। वह मन-माना बरतता हुआ लोक-परलोक दोनों गवाँ देता है। और विचारवान्

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

व्यक्ति अपनी विचार-शक्ति से भले-बुरे को पहचान कर, भले को अपनाता है और बुरे को त्यागता है। फलतः वह मोक्ष का भागी होता है।

प्रिय राम ! मोक्ष का तीसरा साधन—संतोषहै। जो कुछ सहज भाव से प्राप्त हो—उसी में संतुष्ट रहने से परम शांति मिलती है। संतोषी व्यक्ति का चित्त कभी भी उद्विग्न नहीं होता। असंतोषी तो असंख्य कामनाओं से घिरा रहता है। वह जितना ज्यादा पाता जाता है उतना और-और पाने की इच्छा करता जाता है। असंतोषी सम्राट् भी दरिद्र ही बना रहता है। उधर संतोषी निर्धन भी, जो कुछ प्राप्त रहता है, उसी में तृप्त रह कर सुख से रहता है। वह संतोष रूपी धन को पाकर, सुख की नींद सोता है।

प्रिय मित्र ! आप तो संतोष कीं मूर्ति ही हैं। आप को पूर्ण संतोषीं पाकर, मुझे बड़ीं खुशीं होनीं है। संतोष से चिन्ता दूर होती है। फिर अतुलनीय शांति मिलती है। संतोषीं जीव मग्न हो विचरता है। कहा भी है—

चाह घटी चिंता मिटी मनुआ बे परवाह।

वशिष्ठ जी आगे बोले—

प्रिय राम ! मुक्ति का चौथा साधन साधु-संगति है। संतो की संगति से अज्ञान दूर होता है। आधि-व्याधि, मोह, भ्रम, मायादि दूर होते हैं। सत्संग से हृदय के मैल धुल जाते हैं। काया निर्मल हो जाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सत्संगति उत्तम तीर्थ स्थानों से भी बढ़ कर पवित्र करने वाली है। तपादि से भी बढ़कर उत्तम फल देने वाली है।

प्रिय राम ! ब्रह्म-ज्ञानी संत जग में दुर्लभ हैं। उनके मिलन से जीवन सुफल हो जाता है। अतएव संतों की सेवा भलीभाँति करनी चाहिए।

प्रिय मित्र ! संत तुलसीदास ने राम चरित मानस (तुलसी कृत रामायण) में सत्संगति की महिमा सुन्दर ढंग से गाई है। आप को जनाये वगैर चैन नहीं मिलता। सुनिए और भरपूर कंठ से अलापिए।

दो० तात स्वर्ग अपवर्ग सुख, धरिअ तुला इक अंग।
तुलै न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सतसंग॥

हें तात ! सत्संगति के सुख को तराजू के एक पलड़े पर रखा जाय और स्वर्ग तथा ब्रह्म-भवन दोनों के सुखों को दूसरे पलड़े पर तो भी सत-संग वाला पलड़ा ही भारी रहेगा।

चौ० मुद मंगल मय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू॥
अकथ अलौकिक तीरथ राउ। देइ सद्य फल प्रगट प्रभाउ॥

संतों का समाज मंगलकारी व सुखदाई है। चलता-फिरता तीर्थराज-प्रयाग के समान पवित्र करने वाला है। तीर्थराज रूपी संत समाज अलौकिक तथा अकथनीय है। इसकी महिमा गाई नहीं जा सकती। यह तुरन्त फल देने वाला है ! इसका प्रभाव प्रत्यक्ष है।

चौ० मज्जन फल पेखिअ ततकाला। काक होहिं पिक बकउ मराला।
सुनि आचरज करै जनि कोई। सत संगति महिमा नहीं गोई॥

इस तीर्थराज रूपी साधु समाज का प्रभाव इतना विलक्षण है कि प्रसन्न मन से सुनने, समझने और गुनने से कौए, कोयल और

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बगुले हंस रूप बन जाते हैं—यह सुनकर कोई आश्चर्य न करे; क्योंकि सत्संगति की महिमा छिपी नही है।

चौ० वालमीक, नारद घट जोनी। निज निज मुखनि कही निज होनी।
जलचर, थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना।।

वाल्मीकि जी, नारद जी तथा अगस्त्य जी ने अपनी-अपनी बीती, अपने आप ही बताई है। जल में रहने वाले, जमीन पर रहने वाले तथा आकाश में उड़ने वाले भाँति-भाँति के जितने जड़ और चेतन जीव इस संसार में हैं।

चौ० मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानव सतसंग प्रभाऊ। लोकहुं वेद न आन उपाऊ।।

उन जड़, चेतन जीवों में जिसने जिस-जिस समय जहाँ कहीं भी जिस किसी यत्न से बुद्धि, यश, ऐश्वर्य, भलाई और सद्गति पायी है— सो, सब सत्साँग का ही प्रभाव जानिए। इनकी प्राप्ति के अन्य साधन लोक तथा वेद में नहीं है।

प्रिय मित्र ! आप रामायण अवश्य पढ़ें। रामायण की पुस्तक आप के पास है ही और आपने कुछ पढ़ा भी तो है !

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! अर्थ (धन) धर्म, काम, और मोक्ष-सबकी प्राप्ति का एक मात्र साधन पुरुषार्थ (यत्न) है। प्राणी अपने प्रयत्न से ही सब कुछ प्राप्त करता है। सिर्फ मन में अकांक्षा (कामना) करने से कुछ लाभ नहीं होता। उसकी पूर्ति के लिए प्रयास, पुरुपार्थ की आवश्यकता होती है।

प्रिय मित्र ! कहीं भी कोई किसी खास काम से ही आना-जाना करता है। कुछ नहीं तो घूमने-फिरने ही जाता है। तो कभी कोई

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहीं सिर्फ एक काम के लिए जाता है—तो कभी कोई-कोई एक साथ दो-चार कामों के लिए जाते हैं।

उसी प्रकार इस संसार में हम लोग चार काम करने आए हैं—पहला धन कमाने, दूसरा कमाए धन से धर्म करने, तीसरा उचित भोग वस्तुओं को प्राप्त कर, शास्त्रानुकूल उपभोग करने और चौथा जन्म-मरण से छुटकारा पाने। जिसने अपने जीवन में इन चारों को हासिल किया—उसी का जीवन सकल समझिए। ये ही—अर्थ, धर्म काम और मोक्ष जीवन के चार उद्देश्य कहे जाते हैं। गृहस्थ जीवन में ही ये चारों प्राप्त किए जा सकते हैं। इसीलिए गृहस्थ जीवन का बड़ा भारी महत्व है। संसार से भागने से काम नहीं चलेगा।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! जब-तक कार्य सिद्ध न हो, तब तक एकाग्र चित्त से प्रयत्न करने जाने ही का नाम पुरुषार्थ है।

पुरुषार्थ के भी दो भेद हैं—एक सत् पुरुषार्थ यानी शास्त्र के अनुकूल और दूसरा असत पुरुषार्थ यानी शास्त्र के प्रतिकूल। सत् पुरुषार्थ से अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है और असत् पुरुषार्थ से अनर्थ की। प्रिय राम ! तू अपने अथक पुरुषार्थ से जीवन के मुख्य उद्देश्य अर्थ, धर्म, काम, और मोक्ष को प्राप्त कर। तभी चिर शांति और अक्षय सुख पावोगे।

प्रिय राम ! आलस्य सभी अनर्थों का जड़ है। उसके चलते जीव निकम्मा हो, संसार में गरीब, मूर्ख व बेकार बना रहता है। कास आलस न होता तो, राम ! आज दुनियाँ में गरीबों, असहायों व मूर्खों की भरमार न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होती । जीवन में तू कभी भी आलस्य को पास न फटकने देना ।

प्रिय राम ! शास्त्रों के पढ़ने अथवा साधु समाज में रहने मात्र से ही सिद्धि नहीं मिलती । सिद्धि तो मिलती है—उनके उपदेशों पर चलने से । सतत् साधना से ही सभी मनोरथ सिद्ध होते हैं ।

प्रिय राम ! जो पुरुषार्थी जीव विघ्न बाधाओं से नहीं घबराता, कार्य पूर्ति में बिलम्ब होने से अथवा रुकावट आने से दिल तोड़ चुप-चाप नहीं बैठ जाना—उसे सफलता अवश्य मिलती है ।

प्रिय मित्र ! अपने पौरुष पर विश्वास करने वाले में अपूर्व शक्ति होती है । वह अपने पौरुष के बल पर संसार में धन, यश मान-मर्यादा सब कुछ हासिल कर सुख से विचरता है । उसका सिर हमेशा ऊँचा रहता है । मर कर, वह परम पद यानीं मुक्ति भी पाता है । और भाग्य भरोसे बैठे रहने वाले आलसी जीव की यहाँ भी दुर्गति होती और मरने बाद वहाँ भी ।

अतएव, **मित्र** ! जब तक जिन्दगी है जीवन के हर मोर्चे पर जूझते रहें । इस जूझने में ही जीवन का रहस्य छिपा हुआ है । मुक्ति भी कर्मवीर को ही बरती है ।

महर्षि वशिष्ठ जी आगे बोले—

प्रिय राम ! आलसी जीव दैव (भाग्य) के भरोसे बैठे रहते हैं । भ्रमवश वे सोचते हैं कि जो भाग्य में बदा होगा वही होगा । काम पूरा होने में जरा भी बिलम्ब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होने से तथा विघ्न बाधाओं के आने से, वे सिर पर हाथ रख बैठ जाते हैं और भाग्य को कोसने लगते हैं। कहते हैं—कामयावी बदी नहीं हैं; प्रयत्न करना व्यर्थ है। ऐसे लोगों को जीवन में असफलता व निराशा ही मिलती हैं। ये लोक-परलोक दोनों गवाँ बैठते हैं।

श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरु देव ! प्रायः लोग, दैव, भाग्य प्रारब्धादि की चर्चा किया करते हैं। कहते हैं—भाग्य में यही बदा है; दैव इच्छा यही है; प्रारब्ध में यही है—इत्यदि इत्यादि। आखिर, ये दैव, भाग्य, प्रारब्धादि क्या हैं ? मुझे समझाइए।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! दैव, भाग्य व प्रारब्ध की कोई स्थिति नहीं है। ये मन की कल्पना मात्र हैं। दुःख में धैर्य बंधाने के कल्पित साधन हैं। मूर्ख लोग इनके भरोसे बैठ कर, अपने अनमोल जीवन को गवाँते हैं। और बुद्धिमान पुरुषार्थी जीव अपने पुरुषार्थ से अपना मनोरथ पूरा करते हैं। वे भाग्य के भरोसे बैठे नहीं रहते।

प्रिय राम ! अपने किए समस्त कर्मों के फल एक-न-एक दिन मिलते हैं। सुकर्मों के फल शुभ व कुकर्मों के अशुभ होते हैं। कर्त्ता को दोनों भुगतने पड़ते हैं। इस जन्म के बाकी कर्म-फल अगले जन्म में मिलते हैं। इस

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रकार के कर्म-फल प्राप्ति रूपी अटल नियम का नाम दैव है। यही भाग्य प्रारब्धादि कहलाता है।

प्रिय राम ! पिछले जन्म तथा इस जन्म के पूर्व कृत कर्म-फल का ही नाम दैव है। यही भाग्य प्रारब्धादि अनेक नामों से पुकारा जाता है। जैसा- जैसा प्रयत्न होता जाता है—दैव, भाग्य व प्रारब्ध भी-वैसे-वैसे बनते जाते हैं। इसलिए, एकमात्र पुरुषार्थ ही सत्य है। तू इसे ही वर। उसके परे, दैव बोल के कोई सत्ता नहीं है।

प्रिय राम ! जैसे कल का बिगड़ा, काम आज सुधारा जा सकता है—वैसे ही पूर्वकृत कर्म-फल पुरुषार्थ से बदले जा सकते हैं। पूर्व कृत कर्म-फल तथा तत्काल के पुरुषार्थ एक प्रकार से दो भेड़ों की नाईं लड़ते हैं। उनमें अधिक बलशाली विजयी होता है। अर्थात् अब का पुरुषार्थ ज्यादा बलवान होने से पूर्वकृत कर्मों के फलरूपी दैव को दबा देता है—भाग्य को पलट देता है और कमजोर होने से खुद कुचला जाता है। फिर, भाग्य प्रबल हो जाता है। इसलिए, प्रिय राम ! मनुष्य को इतना ज्यादा प्रयत्न करना चाहिए जिसमें कि उसके पूर्वकृत कर्मों के बुरे फल मिट जाँय और अब का पुरुषार्थ-फल प्रबल हो जाय।

प्रिय मित्र ! कठोप-निषद-प्रकाश के पृष्ठ ५३ में, दैव, भाग्य, पूर्व जन्म के संस्कार स्वभाव जन्य कमजोरियों की चर्चा की गई है। आपने उसे पढ़ा होगा। पुनः पढ़ें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! मुमुक्षु-प्रकरण की चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में उत्पत्ति-प्रकरण की चर्चा की जाएगी। तब-तक के लिए विदा लेता हूँ। जाते-जाते एक बात और कहे जाता हूँ--उपदेशों को जीवन में उतारने व उनके अनुरूप अपने को ढालने का व्रत, हम दोनों ने शुरू में हीं लिया है। फिर उपदेशों को आचरण में लाते जायँ। कोरे पढ़ते-लिखते जाने से कुछ लाभ न होगा। बल्कि अनमोल समय ही बरबाद होगा। ऐसे आप को मनोरञ्जन के लिए पढ़ना हो तो और है।

भगवान् करें, हम दोनों निरंतर स्नेह-सूत्र में बंधे रहे, हाथ में हाथ दिए भगवत्-मार्ग पर साथ-साथ बढ़ते जाँय।

पुनः प्रणाम !

आप का आत्मरूप

गणेश

ॐ तत्सत्। २७-११-६६

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

प्रिय मित्र,

जमशेदपुर
४-१२-६६

सादर प्रणाम !

पिछले पत्रों में वैराग्य एवं मुमुक्ष् प्रकरण की चर्चा हो चुकी है।

वैराग्य प्रकरण में आप ने रामचन्द्र जी की वैराग्य व ज्ञान-भरी बातें सुनीं। और मुमुक्षु-प्रकरण में प्रथम महर्षि विश्वामित्र ने रामचन्द्र जी को शुकदेव जी के आत्म-ज्ञान के दृष्टान्त के साथ उपदेश दिया। फिर वशिष्ठ जी ने अपने जन्म की वार्त्ता सुनाई; चित्त की स्थिरता, सद् विचार, संतोष और सत्संग की महिमा गाई तथा पुरुषार्थादि का वर्णन सुन्दर ढंग से किया।

आप सभी पत्रों को सिलसिलेवार, पढ़ते व मनन करते जाँय। तभी आगे के विषय समझ में आ सकेंगे। आज उत्पत्ति-प्रकरण की चर्चा शुरू की जाती है। इस प्रकरण के नीचे लिखे मुख्य विषय हैं :—

१. सब कुछ ब्रह्ममय है;—ब्रह्म परे कुछ नहीं है।

२. ब्रह्म की उत्पत्ति संकल्प से है; और उनकी कल्पना से जगत बना है।

३. मन के स्वरूप और उसकी कल्पना से सृष्टि की रचना का वर्णन है।

४. रानी लीला आदि उपाख्यानों द्वारा ज्ञानोपदेश।

प्रिय मित्र ! आगे के विषय अत्यन्त गूढ़ हैं। मन, वचन और कर्म की शुद्धता से अन्तः करण को निर्मल कर, स्नानादि से शरीर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

को पवित्र कर मन को भगवान् में पिरोकर पढ़ें, तभी ये गूढ़-विषय समझ में आ सकेंगे।

मित्र ! कहने वाले में श्रद्धा-भक्ति रहने से, एवं उसकी बातों में प्रतीति होने से ही कुछ लाभ होता है। मेरी बातों में आप को प्रतीति हो, तब तो, ठीक है वरना आप अपने मन-माफिक व्यक्ति के पास जायें और उसके चरणों में बैठ ज्ञान प्राप्त करें। ऐसे तो, मुझे मालूम है कि आप के दिल में मेरे लिए मित्र-प्रेम अकथनीय, अथाह व अगाध है--जिसका मिसाल बहुत कम है; कम क्या ? है ही नहीं।

महर्षि वशिष्ठ जी की बातें सुनने के पहले अपने प्यारे मित्र की ही कुछ और सुन लीजिए :—

प्रिय मित्र ! एक शक्ति है--जो बिना शरीर की है; बिना रूप रंग की है; तथा बिना हाथ, पाँव कानादि की है। न कभी उपजी न मरी। कहा नहीं जा सकता वह शक्ति कब और कहाँ से आ गई ? वह शक्ति है बड़ी विचित्र--बिना पैर के चलती है, बिना कान के सब कुछ सुनती है; बिना आँख के सब कुछ देखती है और बिना हाथ के ही भाँति-भाँति के कर्म करती है।

वह शक्ति किसी यंत्र द्वारा देखी नहीं जा सकती। प्रयोगशाला में वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा बतलाई नहीं जा सकती। जो कुछ दीखता है; जो कुछ बुद्धि से जाना जाता है, मन जिस-जिस की कल्पना करता हैं, जो बुद्धि और मन से भी परे है, सब में वह शक्ति व्याप्त है। वही सब की शक्ति है, वही सब की जान है, वही सब की उत्पत्ति और स्थिति का कारण है। उसके बिना भी कुछ नहीं है— उसके परे भी कुछ नहीं हैं।

वह शक्ति क्या है ? कब से है ? कहाँ से आई है ? कैसे बरतती है ?—आदि बातों का पता लगाते ही लोग रह गए, कुछ निश्चित रूप से जान नहीं पाए। हार कर लोगों ने कहा—वह शक्ति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपरम्पार है। उसका भेद जाना नहीं जा सकता। लोगों ने अपने मन से उस शक्ति का नामकरण किया--किसी ने ब्रह्म कहा--किसी ने प्रभु, किसी ने ईश्वर, किसी ने खुदा तो किसी ने गौड (God) कह दिया। अनेक नाम मित्र ! गिनाए नहीं जा सकते। किसी ने उसे मन्दिर मे बैठाया, किसी ने गिरजे में, तो किसी ने मस्जिदादि में ही। अज्ञान वश लोगों ने उसका बँटवारा भी कर लिया।

किसी दिन ब्रह्म के मन में उठा कि एक और शक्ति बने ! बस, एक और शक्ति बन गई। वह भी उन्हीं की तरह, अशरीरी--बिना रूप-रंग की। न देखी जा सकती न दिखाई जा सकती। उसका नाम आगे चल कर, लोगों ने रख दिया ब्रह्मा।

जैसे जल से उसके तरंग, दीप से उसकी रोशनी, सूर्य से ही उसकी किरणों—वैसे ही ब्रह्मा नामक उस अशरीरी शक्ति से अनंत सृष्टियाँ उपजीं। उसमें भाँति-भाँति के जीव उत्पन्न हुए। नदी-नाले, बन-उपवन, पत्थर-पहाड़, सागर महासागर, चन्द्र-सूर्य्य, देश-महा-देशादि बने !

फिर, उन सृष्टियों के संचालन के अटल नियम बने;--उन्हीं के अनुसार ये सृष्टियाँ अनंत काल से बनती व बिनसती आ रही हैं। उनके जीव, पेड़, पौधे, तथा निर्जीव पदार्थ भी उसी विधान के अन्तर्गत जन्मते-मरते, बनते-व-बिगड़ते आ रहे हैं। उस अटल विधान का नाम लोगों ने प्रकृति रखा।

मित्र ! ब्रह्म को न मानने वाले, संसार के कुछ लोग, इसी प्रकृति को सब कुछ मानते हैं ! इसी को जग कर्त्ता मानते हैं।

अब, आप गौर कीजिए--ब्रह्म एक अद्भुत अलौकिक निराकार शक्ति, जो देखी नहीं जा सकती, उससे उसी प्रकार की ब्रह्मा नामक दूसरी शक्ति उपजी, फिर उस शक्ति (ब्रह्म) से सारा जहान

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपजा। इन सब का प्रमाण साधना के शुरु में, गुरु व शास्त्र के बचनों में प्रतीति हैं।

सिर्फ ब्रह्म नामक शक्ति ही सदा से एक-सा रहने वाली है। उस शक्ति से उपजी ब्रह्मा नामक दूसरी शक्ति तथा ब्रह्मा से उत्पन्न समस्त सृष्टियाँ नश्वर हैं।

मित्र ! ब्रह्मा में भी अपनी शक्ति नहीं है। उनमें भी ब्रह्म से ही शक्ति प्रवाहित होती है। इसलिए, सही माने में, सिर्फ एक ही शक्ति है—वह ब्रह्म है। उसके परे कुछ नहीं है।

सृष्टियाँ भी अनेक हैं। उनके अलग-अलग चन्द्र-सूर्य्यं हैं।

ब्रह्मरूपी शक्ति से बिखरे अंश ही, लीलावश उसके संकल्प मात्र से अनंत जीव बनते हैं, और मनुष्य, पशु, पक्षी, अंडज-पिंडज आदि में जीव रूप में प्रकट होते हैं।

मुझे ऐसा लगता है कि सर्व प्रथम निरा संयोग वश, ब्रह्म शक्ति का कोई अंश मनुष्य में, तो कोई पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े आदि में जीव के रूप में प्रकट हुए होंगे। आगे चलकर कर्मानुसार चौरासी लाख योनियों में पुनः पुनः जन्मने व मरने लगे होंगे।

प्रिय मित्र ! सब की पैदाइशी बुद्धि एक सी नहीं रहती। किसी की तेज तो किसी की मंद, किसी की शुद्ध तो किसी की मलीन—जितने लोग उतनी तरह की बुद्धि होती है। मुझे लगता है कि शुरु में ही ऐसे ही लोग पैदा हुए होंगे। उनके प्रथम जन्म के कर्मानुसार संस्करादि के निर्माण पुनर्जन्मों में होते आ रहे हैं। तब से, जीव अपने अच्छे-बुरे कर्मों की कमाई को संस्कार के रूप में ढोते आ रहा है। अपने पूर्व जन्म के संस्कार को जीव मर कर वैसे ही लेते जाता है—जैसे फूल की गंध को वायु उड़ा ले जाती है। अगले जन्म में वही संस्कार लेकर जन्मता है। सच पूछिए तो, यह संस्कार ही मनुष्य-जीवन की सच्ची कमाई है।

ब्रह्म का अंश ही जीव रूप में आत्मा कहलाता है। यह तब-तक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पुनः पुनः जन्मता व मरता रहता है—जब-तक कि पुनः ब्रह्म में मिलकर एक नहीं हो जाता। उसका ब्रह्म में मिल जाना ही—निर्वाण पाना है—इसी को मोक्ष, मुक्ति आदि अनेक नामों से पुकारते हैं। यही बौद्धों का कैवल्य है। भगवत की प्राप्ति भी इसी को कहते हैं।

प्रिय मित्र! जीवन का एक मात्र उद्देश्य निर्वाण पाना है। इसके लिए लोग भिन्न-भिन्न साधन व मार्ग अपनाते हैं। कोई ज्ञान को, कोई भक्ति को, कोई कर्म को,—कोई एक को तो कोई दो को, तो कोई-कोई तीनों को ही—अपनाते हैं। अपनी रुचि के अनुसार लोग तरह-तरह के प्रयास-तप् योग-जाप, ध्यान, दानादि—करते हैं।

योगवाशिष्ठ के अनुसार—कर्म से चित्त की शुद्धि होती है। चित्त शुद्धि के बाद ही ज्ञान की प्राप्ति होती है। और ज्ञान से ही मुक्ति मिलती है। ज्ञान को सर्व श्रेष्ठ माना गया है।

अज्ञान वश ही जीव को संसार भासता है। संसार के भासते रहने से जीव वासनाओं में लिपटा रहता है। वासना के फलस्वरूप जीवन-मरण के चक्र में पड़ा रहता है।

साधना करते-करते, जब प्राणी अपने सहज प्राप्त कर्मों को निष्काम भाव से करने लगता है, हानि-लाभ में एक-सा रहने लगता है, हर परिस्थिति में अविचलित रहने लगता है; विकट से विकट घटना से जब उद्विग्न नहीं होता, जब उसकी समस्त कामनाएँ मर जाती हैं, उसके ज्ञान-चक्षु पर पड़े माया के परदे फट जाते हैं—फिर सब कुछ ब्रह्ममय दीखने लगता है। अपने को भी ब्रह्म रूप समझता है, दूसरे को भी— जो कुछ दृश्य मान है—सब को ही ब्रह्म-मय। फिर उसे संसार नहीं भासता। मित्र! यही साधना की चर्म सीमा है—यही स्थिति जीवन-मुक्त की है। ऐसा व्यक्ति परमानन्द में विचरता है। दुःख, चिन्ता ग्लानि आदि उसे छू नहीं पातीं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन्हीं बातों को आप, आगे महर्षि वशिष्ठ जी वाणी में सुनिए :—

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! जीवन मरण का संबंध सिर्फ शरीर से है। आत्मा सदा एक सी रहने वाली है, न यह जन्मती है न मरती है। यह जगत की उत्पत्ति के पहले भी थी और बाद में भी रहेगी। जगत बार-बार उत्पन्न हो-हो कर कल्प के अंत में लय हो जाता है।

मेरा-तेरा अपना-पराया आदि का संबंध केवल शरीर से है। आत्मा से नहीं। शरीर से ही जगत और इसके प्रपंच का सरोकार है। आत्मा से कदापि नहीं।

भ्रमवश जीवधारी अपने को शरीर मान बैठता है उसी से राग करता है। फिर इस शरीर से सरोकार रखने वाले अपने पराये, तेरे-मेरे जगत के प्रपंचों में बंधता है।

आत्म-बोध होते ही, जीव को आभास मिल जाता है कि वह आत्मा है। शरीर नहीं ब्रह्म का अंश आत्मा ब्रह्म रूप ही है। आत्म ज्ञानी अपने को ब्रह्ममय ही पाता है। सारा बिश्व ही उसे ब्रह्ममय दीखता है। फिर उसे संसार नहीं भासता। फलतः वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाता है।

प्रिय राम ! शरीर भी दो प्रकार का होता है—एक आति वाहिक और दूसरा आधि भौतिक। आति वाहिक

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शरीर-अत्यन्त सूक्ष्म—एक प्रकार से काल्पनिक ही होता है आधिवाहिक—आकाश जल, अग्नि मिट्टी और वायु से बना स्थूल शरीर है। मृत्यु-स्थूल शरीर की ही होती है। सूक्ष्म शरीर की नहीं।

ब्रह्मा की उत्पत्ति संकल्प मात्र से है। उनका शरीर सूक्ष्म (आति वाहिक) है उससे मृत्यु उन्हें नहीं मार सकती। वे जन्म-मरण से परे हैं।

प्रिय मित्र ! हम लोगों का भी वास्तविक शरीर आति वाहिक (सूक्ष्म) ही है जो मृत्यु से परे है। अपने को आधि भौतिक (स्थूल) शरीर हम लोग अज्ञान वश मान लेते हैं—इसी से जन्म-मरण और उनको दुःख व्यापता है।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! मन ही सारे प्रपंचों का जड़ है। मन से सुख मिलता है व मन से ही दुःख। मन से ही स्वर्ग, मन से ही नरक। मन ही से मोक्ष का भी कारण होता है। जगत की रचना भी मन की कल्पना से ही होती है।

श्री राम चन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! मन का स्वरूप विस्तार में बतलाइए।

तब वशिष्ठ जी बोले—

प्रिय राम ! मन का स्वरूप आत्मा ही जैसा आति वाहिक (सूक्ष्म) है। आत्मा का ही एक रूप है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उसकी शक्ति विचित्र है-अनंत है। यह बड़ा बलशाली है। संकल्प-विकल्प करना ही—इसका काम है। वाहरी जगत, विषय वासनाओं आदि से जीव का लगाव मन ही लगाता है। मन ही अपने संकल्प से भाँति-भाँति की सृष्टियों तथा वस्तुओं की रचना करता है। मन ही सारे प्रपंचों का कर्त्ता-धर्ता है।

प्रिय राम ! मन बहुरुपिया है। यह भिन्न कार्य्यों को भिन्न-भिन्न रूपों में करता है। कार्य्य और रूप के अनुसार भिन्न-भिन्न नामों से पुकारा जाता है—बुद्धि अहंकार, चित्र, कर्म कल्पना, स्मृति, वासना अविद्या, मल माया प्रकृति, ब्रह्मा जीव आति वाहिक इन्द्रियाँ आदि यही कहलाता है।

जब परमात्मा रूपी शक्ति बाहरी दृश्यों को अपने में समेट कर गर्भित [भरी हुयी] होती है तो मन कहलाती है।

वही शक्ति जब विषयों को ग्रहण कर, अच्छे बुरे आदि का संचार करती है—तो बुद्धि कहलाती है।

जब मिथ्या अभिमानवश अपने को ही सर्वेसर्वा समझने लगता है तो मन अहङ्कार कहलाता है।

जब वही चंचल हो जाता है—जब एक विषय [भोग वस्तु] से दूसरे भोग वस्तु पर विचरने लगता है, तो चित्त कहलाता है।

निरंतर क्रिया शील रहने वाला मन, जब किसी कार्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

के फल को पाने की चेष्टा करने लगता है तो कर्म कहलाता है।

कल्पना—जब वह प्राप्त वस्तुओं की अवहेलना कर अप्राप्त की कल्पना करने लगता है—तो कल्पना कहलाता है।

स्मृति—बीती बातों को स्मरण (याद) करने से स्मृति कहलाता है।

वासना—भले-बुरे, आगे-पीछे के सभी प्रकार के विचारों को भुला कर, जब मन किसी वस्तु को प्राप्त करने पर तुल जाता है—तो वासना कहलाता है।

अविद्या—ब्रह्म ही एक सत् तत्व है—बाकी सब मिथ्या है—का आभास न कर सकने पर मन अविद्या कहलाता है।

मल—जब मन परमात्मा को भुला कर, नाना प्रकार की कल्पना करने लगता है, तो 'मल' कहलाता है।

माया—सही को गलत, और गलत को सही समझने लगने पर, परमात्मा को न मानने लगने पर तथा सत् और असत् दोनों बताने लगने पर मन माया कहलाता है। माया रूप में मन जीव को बहुत भ्रमाता है।

प्रकृति—जो कुछ दृश्यमान है—सब परमात्मा का ही विस्तार है—ऐसा अनुभव करने पर मन प्रकृति कहलाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ब्रह्मा—सृष्टि रचता हुआ मन ही कभी विराट, कभी सनातन, कभी नारायण, कभी ईश्वर तो कभी प्रजापति आदि कहलाता है।

जीव—संसार में चेतन (सजीव) पदार्थ को ही जीव व पशु कहते हैं। मन ही जीने और चेतन होने से जीव कहलाता है।

आति वाहिक—बिना रूप रंग के अशरीरी तथा अनामय (नीरोग) कलना (पकड़) होने के कारण मन आति वाहिक देह कहलाता है।

इंद्रिय—सुन कर, सूंघ कर, छू कर, देख कर, भोग कर, विचार कर, मन, शरीर के मालिक आत्मा को, आनन्द देता है—उनका भान कराता है—इससे इंद्रिय कहलाता है।

प्रिय मित्र ! ब्रह्म की तरह मन भी अशरीरी है। यह भी ब्रह्म रूप एक शक्ति मात्र ही है। ब्रह्म की तरह इसकी भी कोई सीमित परिभाषा नहीं हो सकती। सच पूछिये मित्र ! तो ब्रह्म ही सब कुछ है। मन बुद्धि अहंकारादि तथा समस्त दृश्यमान व अदृश्यमान जगत उन्हीं के भिन्न-भिन्न रूप हैं।

भ्रम वश, हम लोगों को एक ही ब्रह्म भिन्न-भिन्न रूपों में दीखता है। यहाँ तक अज्ञान वश हम लोग सार तत्व, ब्रह्म को भूल ही जाते हैं। उनकी तो छाया तक नहीं दीखती—दीखता है-मिथ्या जगत-प्रपंच और यही सत् भासता है। इसी अज्ञान को दूर करने में—दारो मदार है।

कोशिश कीजिए—इस अज्ञान को दूर करने को और ज्ञान की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बाजी लगा, ज्ञान प्राप्त कीजिये। फिर, मिलेगा आभास उस अपूर्व, अवर्णनीय, अलौकिक ब्रह्म नामक शक्ति का। फिर तो अपने आप को आनन्दमय ब्रह्म ही पाइएगा।

आप उस जगत से ऊपर उठ कर, उस अलौकिक ब्रह्म रूपी जगत में प्रवेश कीजिए—जहाँ आनन्द ही आनन्द है। जो काम हम लोग करते हैं—उन्हें करते हुए—जहाँ और जिस परिस्थिति में रहते हैं—वहीं और उसी परिस्थिति में रहते हुए ही आनन्दमय दुनियाँ में भ्रमण करेंगे। सिर्फ भावना बदलने की आवश्यकता है।

पत्र बहुत लम्बा होता जा रहा है। अन्य बातों की चर्चा अगले पत्र में होगी। तब-तक के लिए बिदा दीजिए।

सस्नेह प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

------ —

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

जमशेदपुर
प्रिय मित्र ! १७-१२-६६

सादर प्रणाम !

पिछले पत्र में उत्पत्ति प्रकरण के कुछ भाग की चर्चा हो चुकी है। शेष की शुरू की जाती है।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! वास्तव में जगत उपजा ही नहीं। केवल अज्ञानियों को यह भ्रमवश भासता है। ज्ञानियों को तो सारा विश्व ब्रह्ममय प्रतीत होता है। वे अपने को ब्रह्म का अंग आत्मा समझते हैं। आत्मा तो उन्हें अजन्मा, अविनाशी सदा एक रस रहने वाली प्रतीत होती है। वे अपने को जन्म-मरण से परे पाते हैं। उन्हें सांसारिक क्लेश भी नहीं व्यापते। अज्ञानी ही, पुर्नजन्म का भागी बनता हैं। उसे ही सभी प्रकार के दुःख व्यापते हैं।

प्रिय राम ! सृष्टियाँ भी एक में दूसरी-दूसरी में तीसरी-इस प्रकार से अनेक हैं। एक सृष्टि का वासी दूसरी सृष्टि की नहीं जान पाता है।

प्राणी अपनी सृष्टि को रचना आप करता है। जैसी उस की वासना रहती है-वैसी ही सृष्टि रचता है। स्त्री, संगी, साथी आदि भी उसकी वासना के अनुकूल ही मिलते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! रानी लीला के पति, राजा पद्म अपनी वासना के ही चलते भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मे ।

तब श्री राम चन्द्र जी बोले—

गुरु देव ! रानी लीला और राजा पद्म की कहानी सुनाइए । वासनावश राजा पद्म किस तरह भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मे-मुझे बताइए ।

रानी लीला की कथा

महर्षि वशिष्ट जी बोंले—

प्रिय राम ! किसी समय, इसी लोक में, पद्म नामक राजा राज करते थे । उनको लीला नाम की रानी थी । दोनों एक से एक गुणी व सुन्दर थे । दोनों में प्रीति भी अटूट थी । एक दूसरे के बिना कल नहीं पड़ती थी ।

जवानी-भर दोनों ने जी भर सुख भोगा । बुढ़ापा आने लगा तो रानी को चिन्ता हुई । वह मन-ही-मन सोचने लगी—"अगर पति देव मुझ से पहले चल बसे, तो मैं कैसे जी सकूँगी ।" सोच-सोच दुःखी रहने लगी ।

एक दिन लीला ने राज पुरोहितों को बुलाकर, पूछा-पण्डितगण ! ऐसा कोई उपाय बताइए; जिस में मैं और मेरे प्राण-प्रिय-राजा पद्म-कभी नहीं मरें ।"

पण्डितों ने एकमत से कहा—"महारानी ! इस संसार में, जो जन्मता है, एक-न-एक दिन अवश्य ही मरता है । मृत्यु टाली नहीं जा सकती ।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! पंडितों की बात सुनकर, रानी और चिन्तित हुयीं। लेकिन हिम्मत नहीं हारीं। वे सरस्वती की आराधना तन-मन-धन से करने लगीं। उनकी साधना फलवती हुई;—सरस्वती देवी प्रकट हुईं।

देवी सरस्वती बोलीं—"बेटी लीला ! तू चिंता मत कर। तेरे पति की मृत्यु पहले होने पर, उनका जीव तेरी कोठरी में रहेगा। उनका शव तब-तक बचा कर रखना जब-तक कि राजा पुनः जी न उठें। और बेटी ! जब-जब तू मुझे चाहेगी;—तब-तब मैं याद करते ही प्रकट हूँगी।"

प्रिय राम ! इतना कह कर, सरस्वती जी अन्तंधान हो गयीं। लीला खुशी-खुशी रहने लगीं।

समय आने पर, एक दिन राजा पद्म की मृत्यु हो गई। लीला बिलपने लगीं। उन्हें एक-व-एक सरस्वती देवी की बात याद आई। तब उन्होंने राजा के शव को फूलों से ढँक कर, अपने कमरे में ही सुरक्षित रख दिया और सरस्वती देवी का आवाहन किया।

देवी सरस्वती प्रकट हुईं और बोलीं—बेटी लीला ! तू नाहक क्यों बिलपती है ! तेरे पति का जीव तेरे कमरे ही में है। तू लाश को बचाए रख। जीव एक-न-एक दिन उसमें प्रवेश करेगा और राजा पद्म जी उठेंगे। तू शोक मत कर।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

और बेटी ! सृष्टि में सृष्टि—न जाने कितनी सृष्टियाँ इसी तेरी कोठरी में हैं। तेरा पति पद्म किसी एक में यहीं हैं। सूक्ष्म लोकों में प्रवेश करने की कला, मैं तुझे बताती हूँ। पहले तू भली-भाँति जान ले। फिर, मेरे साथ, अपने पति के लोक में प्रवेश कर, सब कुछ अपनी आँखों देख। अपने मरे पति का दर्शन कर ले।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! देवी सरस्वती ने लीला को सूक्ष्मतर लोकों में प्रवेश करने की युक्ति बताई। फिर, दोनों उस लोक में गईं—जहाँ राजा पद्म विराजमान थे। वह लोक रानी की उसी कोठरी के भीतर ही था।

प्रिय राम ! लीला ने उस लोक में देखा कि—उनके मरे पति सोलह वर्ष के हो गए हैं और एक विशाल राज्य पर राज कर रहे हैं। फिर, तो रानी के विस्मय का ठिकाना न रहा—क्योंकि राजा तो अभी-अभी मरे थे।

रानी लीला बोली—

देवी जी ! मेरे पति के मरे, अभी चन्द घंटे ही हुए हैं। इतनी ही देर में राजा सोलह के कैसे हो गये ? और इतना बड़ा विशाल राज्य मेरी छोटी सी कोठरी में कैसे समाया हुआ है ?

प्रिय राम ! तब देवी सरस्वती बोलीं—

प्रिय लीला ! अलग-अलग सृष्टियों के समय तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

माप अलग-अलग हैं। किसी सृष्टि के कल्प का समय दूसरे में क्षण में बीत जाता है। पल में ही कल्पों की घटनाएँ वैसे ही गुजर जाती हैं, जैसे एक क्षण के स्वप्न में सालों की बीती बातें। तू यह जान कर और विस्मित होगी कि तेरे पति राजा पद्म होने के पहले, वशिष्ठ नाम से एक ब्राह्मण हुए थे, और अरुन्धती नाम से तू ही उनकी पत्नी थी। उनके मरे, उस लोक में अभी एक सप्ताह भी न हुआ। उनकी झोपड़ी अभी भी खाली पड़ी है। उनके पुत्र आदि अपने लोग शोक मना रहे हैं। तुझे न विश्वास हो तो, चल कर देख ले।

प्रिय राम ! कुतूहल वश रानी लीला, सरस्वती देवी के साथ उस लोक में देखने गईं। वहाँ पहुँच कर, उन्होंने एक खाली झोपड़ी देखी। पूछने पर, लोगों से मालूम हुआ कि उसमें वशिष्ट नामक एक ब्राह्मण अपनी स्त्री अरुंधती के साथ रहते थे। एक हफ्ता पूर्व मर चुके थे। लड़के बच्चे शोक मना रहे थे। लीला सब कुछ देख अत्यन्त क्षोभित हुईं।

फिर देवी सरस्वती बोलीं—प्रिय लीला ! ब्राह्मण वशिष्ठ के राजा पद्म होने का वृतान्त तू सुन—

एक दिन, ब्राह्मण वशिष्ठ ने किसी राजा की सवारी ठाट-बाट के साथ जाते देखा। उनके दिल में राज-सुख भोगने की वासना जाग उठी। अपनी दृढ़ वासना वश वे

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मर कर, राजा पद्म हुए। उनकी स्त्री अरुंधती यानी तू उन्हें बड़ी प्यारी थी। अरुंधती को यानी तुझे भी उनके लिए प्रेम अपार था। तू ने भी बर मांग रखा था कि तेरे पति पहले मरे तो उनका जीव तेरी कोठरी में ही रहे। पति की चिता पर जल कर तू भी सती हो गई।

फिर पुनर्जन्म में तू, लीला नाम के राजा पद्म की रानी हुई—वही तू है। इस प्रकार से तुम दोनों का जन्म वासनानुसार ही हुआ। दोनों प्रेम वश साथ-साथ रहना चाहते थे। इसलिए दूसरे जन्म में भी साथ-साथ रहे। और जब-तक यह वासना बनी रहेगी तब-तक जन्म-जन्मातर तक साथ नहीं छूटेगा। ये सब हुए अभी इस लोक में एक ही हफ्ता हुए हैं। तुम दोनों के जीव अभी भी उस कुटिया के भीतर ही हैं।

महर्षि वशिष्ठ बोलते रहे—प्रिय राम! लीला को कुतूहल वश अपने पूर्व जन्मों को जानने की इच्छा हुई। सरस्वती देवी की कृपा से उसे सब कुछ मालूम हो गया। अपने अनेक जन्मों का हाल जान कर, वह अत्यन्त विस्मित हुई।

प्रिय राम! फिर लीला सरस्वती देवी के साथ उस लोक में गई—जहाँ राजा पद्म, विदुरथ नाम से राज करते थे। उसे देख कर आश्चर्य हुआ कि वे सत्तर वर्ष का बूढ़ा हो गए थे। उनके वर्त्तमान पत्नी का भी नाम लीला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ही था । लीला को वे बहुत चाहते थे; इसलिए, इस जन्म में भी उन्हें लीला ही मिली थी ।

देवी सरस्वती और लीला राजा विदुरथ से एकान्त में मिलीं और उन्हें, उनके पिछले जन्म की याद दिलाईं । राजा विदुरथ को पुनः राजा पद्म बनने की वासना जाग उठी ।

इसी बीच दूसरे देश के राजा से लड़ाई छिड़ गई । लड़ाई में राजा विदुरथ मारे गए । उनका जीव जो लीला की कोठरी में ही था—उनके (राजा पद्म के) सुरक्षित शव में प्रवेश कर गया । वे जी बैठे । उन्हें अपने बीते दिन याद आए । उनके वासनानुसार, उनकी लीला नामक दोनों पत्नियाँ भी मौजूद थीं । दोनों के साथ रह, राज-पाट देखते हुए, राजा ने अपनी जीवन यात्रा समाप्त की ।

प्रिय मित्र ! जीवन की सारी घटनाएँ वासना वश ही उठती हैं । हर जीव की वासनाएँ, ही उनकी भिन्न-भिन्न सृष्टियों को स्वयम् रचती हैं । स्त्री, पुत्र, मित्रादि समस्त को आप जनती हैं मेरी और आप की वासनाएँ जब-तक एक दूसरे में कायम रहेंगी तब-तक प्रत्येक जन्मों में एक दूसरे के बने रहेंगे । इसे कोई टाल न सकेगा ।

लेकिन मित्र ! जब-तक वासनाएँ दूर न होंगी तब-तक, सच मानिए, मुक्ति कदापि नहीं होगी । और मित्र ! अब-तक वासनात्मक भोगों से क्या सच्चा सुख मिला, कि आगे मिलेगा ! अब-तक तृप्ति हुई; कि आगे होगी ! ! समस्त भोग वस्तुएँ क्षणिक प्रिय भासने वाली हैं । उनका आदि–अंत दोनों दुःखदाई हैं ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

फिर एक दूसरे में इतना राग क्यों ! क्यों नहीं,--भगवान् में लौ लगाया जाय। आप स्वयम् विचारिए। संत तुलसी दास की प्रिय भार्या ने यही न कहा था—"जितना आप मुझ में रत्त हैं, उतना भगवान् में होते तो आप का परलोक बन जाता।"

प्रिय पत्नी की इतनी-सी बात ने उनकी जीवन-धारा पलट दी। वे भगवान् में अनुरक्त हो गए। इसी लिए, न मैं कहा करता हूँ कि बहुत जानने की कोशिश के बजाए थोड़े ही को जीवन में उतारते जाँय। पहाड़ भर सदुपदेशों को पढ़ने, सुनने व रटने से रत्ती भर को ही जीवन में उतारना बढ़ कर है।

सिर्फ पढ़ते न चले जाँय। रुक-रुक कर विचारते भी जाँय। अमल में लाते भी जाँय। तभी पढ़ना सार्थक !

उस प्रकरण की शेष बातों की चर्चा अगले पत्रों में होगी। तब-तक के लिए विदा लेता हूँ।

सप्रेम प्रणाम !

आपका आत्म स्वरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

प्रिय मित्र ! **जमशेदपुर**

१८-१२-६६

सादर प्रणाम !

जीव की वासनाएँ ही उसे नचाती हैं, वे ही उसके संगी-साथी, स्त्री पुत्रादि चुनती हैं; वे ही उसे भोगों में लगाती हैं; उसकी सृष्टियाँ भी वे ही रचती हैं—आदि बातों की चर्चा पिछले पत्र में हो चुकी है। आगे महर्षि वशिष्ठ मन की अद्‌भुत शक्ति का दिग्दर्शन कराते हैं। आप के मन लायक कहानी भी सुनाते हैं। मन लगा कर सुनिए :—

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! सारा जगत-जाल मन में ही समाया हुआ है। मन से ही संसार के सारे प्रपंच उपजते हैं। मन की शक्ति अपार है। अपना मन अपने अनुरूप ही सब कुछ गढ़ता है। जैसा जिसका मन होता है—ठीक वैसा ही वह बनता है।

मन में जो भावनाएँ दृढ़ हो जाती हैं, उन्हें उस जीव के सिवा, दूसरा कोई मिटा नहीं सकता। शरीर को, भले ही, कोई नाश कर दे, किन्तु मन की भावनाओं को कोई मार नहीं सकता। वे वर या शाप से भी नहीं टलतीं।

जिस पर मन रीझ जाता है, जिसे अपने में बसा लेता है, उससे, उसे कोई भी शक्ति छीन नहीं सकती।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दुनिया की कोई भी ताकत जुदा नहीं कर सकती। प्रिय राम ! इन्द्र और अहल्या को कहाँ कोई अलग कर सका !

इन्द्र और अहिल्या की कथा

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! इन्द्र और अहिल्या का वृतान्त बतलाइए।

महर्षि वशिष्ठ जी बोले—

प्रिय राम ! किसी समय, मगध देश में, राजा इन्द्र-द्युम्न राज्य करते थे। वे बड़े गुणशाली व प्रतापी थे। उनके अनुरूप ही उनकी पत्नी-रानी अहिल्या—रूपवती व गुणवती थीं। दोनों में प्रेम भी था। राजा ही थे—भोग विलास की समस्त सामग्रियाँ थीं, बड़े मौज से रहते थे।

संयोग की बात है—उसी नगर में इन्द्र नामक एक अति सुन्दर और चरित्रवान ब्राह्मण कुमार भी रहते थे। थे तो वे मामूली जर-जमीन के, लेकिन उनके रूप-गुण की बहुत शोहरत थी।

ब्राह्मण-कुमार इन्द्र की प्रशंसा सुन कर, रानी अहिल्या की लालसा उनसे मिलने की हुई। सहेलियों व चेरियों ने दो-चार बार चोरी-चोरी भेंट कराईं। दोनों एक दूसरे को अति प्रिय लगे। धीरे-धीरे एक दूसरे पर मोहित हो गए। एक दूसरे के मन में ऐसे बस गए कि शरीर की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सुधि-बुधि ही न रही। अचेत सा रहने लगे। लोक-लाज वश, मिल भी न सकते। एक दूसरे के बिना रह भी न सकते। अजीब परेशानी! दोनों का शरीर विरह में दिन-व-दिन जल-जल कर सूखने लगा।

राजा इन्द्रद्युम्न ने सोचा—रानी बीमार पड़ गई। बेचारे ने काफी इलाज कराया था। योग-जाप भी कराए, किन्तु सब विफल रहा। जब उन्हें इन्द्र से प्रेम की बात मालूम हुई, तो उबल पड़े। उन्होंने दोनों प्रेमियों को नाना तरह के कष्ट दिए। सभी तरह के भय दिखलाए। लेकिन एक दूसरे को उनके दिल से हटा न सके।

ब्राह्मण कुमार इन्द्र ने कहा—"महाराज! मेरे दिल में रानी अहिल्या बस गईं हैं। मुझे उनके सिवा कुछ नहीं दीखता। कोई भी क्षण ऐसा नहीं, जब उनकी छबि मेरे दिल व दिमाग में न हो। मैं तो उन्हीं में डूबा रहता हूँ। आप के द्वारा दी गई शारीरिक यातनाएँ मुझे तनिक नहीं लगती। आप के नौकर-चाकर मारते-मारते थक जाते हैं; लेकिन मुझे चोट नहीं लगती। आप मेरे, शरीर को, भले ही, नष्ट कर दें; किन्तु रानी को मेरे मन से नहीं हटा सकते। और महाराज! मैं असहाय हूँ; अवश हूँ। सच मानिए—मैं चाहकर भी रानी को दिल से नहीं हटा पाता। फिर, मेरा क्या कसूर है!"

प्रिय राम! जब रानी अहिल्या ने भी ऐसा ही कहा,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तो राजा को बहुत खेद हुआ। जब किसी भी तरह से दोनों को अलग न कर सके तो राजा को बड़ा भारी क्षोभ हुआ। हार कर, उन्होंने अपना दुःखड़ा भरत मुनि से सुनाया और दोनों को शाप देने के लिए विनती की।

भरत मुनि ने इन्द्र और अहिल्या को मर जाने का शाप दिया। तब उन लोगों ने कहा—"मुझे ! आप के शाप से हम लोगों के शरीर भर का ही नाश होगा। शरीर के नाश होने पर भी हम लोग एक दूसरे के बने रहेंगे। जुदा कभी न होंगे।"

प्रिय राम ! यही हुआ। शाप वश दोनों प्रेमी-प्रेमिकाओं ने मर कर मृग योनि में जन्म लिया और एक दूसरे में रत रह, जीभर सहवास सुख भोगे। उसके बाद, पक्षी, मनुष्यादि अनेक उत्तम योनियों में जन्में और हर योनि में दोनों साथ-साथ रहे।

प्रिय राम ! भरत मुनि का शाप भी, उनके शरीर भर का नाश कर सका। एक दूसरे को उनके मन से निकाल नहीं सका। मन इतना बल शाली है। जहाँ टिक जाता है, वहाँ से हटाए नहीं हटता।

प्रिय मित्र ! इन्द्र और अहिल्या का प्रेम सच्चा था— अगाध व अथाह था। तभी उनको शारीरिक कष्ट न व्यापे। आज-कल के, बाजारु प्रेम का फल ऐसा न होगा। वह तो घुड़की पर ही काफूर हो जाएगा। दो-चार तमाचे में ही प्रेम का भूत भाग जाएगा।

मित्र ! प्रेम की दर्द भरी मिठास को दो प्रेमी ही जानें। वैरा-गियों के लिए तो, 'बन्दर क्या जाने आदी का स्वाद'— वाली

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहावत ही चारितार्थ होगी । आखिर यह प्रेम है, कौन सी बला ! —इसकी चर्चा अलग से कभी होगी !

प्रिय मित्र ! कहानियों का सहारा किसी एक खास विषय को झलकाने के लिए लिया जाता है । उनका हर पहलू जीवन के साथ लागू नहीं होता – वैसा करना उपयोगी न होगा । ब्राह्मण कुमार इन्द्र और रानी अहिल्या की प्रेम-कहानी के माध्यम से मन की अनुरक्ति, उसकी विशाल शक्ति आदि का बोध कराया गया है । बस, इतने मात्र तक ही उपयोगी हैं ।

दोनों की तरह प्रेम-पाश में फंसने का स्वप्न देखने लगना सर्वथा अनुचित होगा । भारतीय वैंदिक शास्त्र तो अपनी लड़की से भीं एकान्त में बातें करने से मना करता है । यही है, उच्च कोटि की आदर्श शिक्षा । इसका पालन करने से प्रेम-पाश में फंसने का भय जाता रहेगा । सच पूछिए, तो नर-नारियों में उच्छृंखल प्रेम की उत्पत्ति काम-वासना से ही होती है । इस प्रकार का प्रेम निंदनीय है । आचरण का महान् दोष है ।

अगले पत्र की प्रतीक्षा करें ।

सप्रेम प्रणाम !

आप का आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

प्रिय मित्र ! जमशेदपुर

१८-१२-६६

सादर प्रणाम !

मन की अद्‌भुत शक्ति का वर्णन होता आ रहा है। ब्राह्मण कुमार इन्द्र और रानी अहिल्या की प्रेम-कहानी आप ने पिछले पत्र में सुनी। आप को बहुत भायी होगी। इस पत्र में इन्द्रजाल की मनोहर कहानी सुनिएगा।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! मन अतुल बल शाली और चतुर चितेरा है। सारे विश्व को अपने आप में गर्भित कर स्थित है। पल में जग रचता है और पल में समेटता है। युगों व कल्पों में घटी घटनाओं को क्षण में भाँप लेता है।

प्रिय राम ! इन्द्र, जाल की कहानी से, मन की विपुल शक्ति का बोध तुझे भली-भाँति हो जाएगा।

तू सुन—

इन्द्रजाल-कथा

किसी समय, उत्तर पाण्डव देश में, लवण नामक प्रतापी राजा राज्य करते थे। एक दिन उनके राज-दरबार में एक इन्द्रजाल (जादूगर) आया। राजा ने उसे अपनी जादू दिखाने को कहा। तब जादूगर ने अपनी पिटारी से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एक मोर पूँछ का गुच्छा निकाला और राजा के मुँह पर घुमा दिया।

गुच्छा घुमाते ही राजा को गाढ़ी नींद आ गई। वे दो घड़ी तक सोए रहे। इधर दरबारी लोग जादूगर को कोसने लगे। बेचारा जादूगर उन्हें धीरज बंधाता रहा। दो घड़ी के बाद, राजा की नींद टूटी।

प्रिय राम ! उस दो घड़ी की निद्रा में जो कुछ उन्होंने देखा था—उसका व्यौरा निम्न प्रकार दिया :—

राजा लवण बोले—

प्यारे दरबारियों ! जादूगर के मोर पूँछ का गुच्छा घुमाते ही—मेरी जादूगारी खो गई। मैं अपने को भूल गया। उसी क्षण, किसी देश के राजा का दूत, एक बहुत तेज व सुन्दर घोड़ा लेकर, मेरे पास आया। वह बोला—कि घोड़ा मुझे भेंट में भेजा गया था। मैं बहुत खुश हुआ और घोड़े पर सवार हो बाहर सैर को निकल पड़ा।

घोड़ा मुझे लेकर बड़ी तेजी से भाग चला। लाख रोकने पर भी न रुका। मुझे लिए, नदी-नाला, जंगल-पहाड़ पार करता हुआ भागता ही गया। भागता-भागता मेरा राज्य पार कर विध्याचल के जंगलों में जा पहुँचा।

मैं घोड़े पर बैठे-बैठे तंग आ गया। अंत में उसकी पीठ पर से ही, एक पेड़ की डाल पकड़ कर, झूल गया।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

घोड़ा भागता हुआ आगे निकल गया। फिर, मैं पेड़ से उतर, जमीन पर आ बैठ गया।

मुझे जोरों की भूख-प्यास लगी थी। चारों ओर देखा—कहीं अन्न-जल नहीं दीखा। भूख-प्यास से जी तड़पने लगा। इतने में, काली-कलूटी गंदे कपड़े पहनी हुयी एक लड़की नजर आयी। मैं दौड़ कर उसके पास गया। वह एक बर्तन में भात और दूसरे में जामुन का रस लिए मस्तानी चाल में बढ़ती जा रही थी। प्राण-रक्षा के लिए, मैंने उससे थोड़ा भात और थोड़ा रस माँगा।

तब लड़की ने कहा—"मैं चाण्डाल-पुत्री हूँ। अपने पिता को खिलाने के लिए, भात और जामुन का रस ले जा रही हूँ। यदि तू मेरा पति होना कबूल कर, तो इन्हीं में से थोड़ा-थोड़ा तुझे खिला पिला दूँगी और अपने बाप को मैं किसी तरह राजी कर लूँगी।"

प्यारे दरबारियों ! मैं भूख-प्यास से मरा जा रहा था। उस लड़की का पति बनने को तैयार हो गया। तब उसने, मुझे थोड़ा भात खिला कर, थोड़ा जामुन का रस पिला मेरी जान बचाई। फिर, खुशी-खुशी अपने बाप के पास मुझे ले गई।

बाप से बोली—"पिता जी ! मैंने इस सुन्दर पुरुष को वर लिया है।"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बाप ने कहा—"बेटी ! इसे घर ले जा और सुख से जीवन बिता।"

तब वह चाण्डाल-कन्या मुझे अपने घर ले गई। मैंने उसके घर पर हड्डी, मांस, रक्त तथा कुत्ते, गधे, भैंस आदि जानवरों की खालें चारों ओर पड़ी देखी। लड़की की माँ यानी मेरी भावी सास गंदी व दुर्गंध भरी झोपड़ी में मांस पका रही थी। मुझे अपना भावी दामाद जानकर बहुत खुश हुई। फिर भरी चाण्डाल बिरादरी में धूम-धाम से उस लड़की की शादी मेरे साथ हुई। सबों ने भोज में खूब मांस खाया और मुझे भी खिलाया।

राजा लवण आगे बोले—

प्रिय दरबारियों ! मैं अपने राज-भाव, धर्म-कर्म सब कुछ भुला कर, खांटी चाण्डाल बन गया। चाण्डाल की तरह रहने लगा। दिन, माह, वर्ष-बीतते गए। मुझे अपनी चाण्डाल पत्नी से, तीन पुत्रियाँ और तीन पुत्र हुए। मैं अपने बीबी-बच्चों के साथ घर गृहस्थी चलाता रहा।

इसी बीच, देश में भीषण अकाल पड़ा। सब लोग दाने-दाने को मोहताज हो गए। मेरे लिए, अब वहाँ रहना मुश्किल हो गया। तब मैं अपनी बीबी बच्चों के साथ, दूसरे देश को चल पड़ा।

रास्ते में सभी भूख से पीड़ित हो गए। राह के थके-मांदे तथा भूख से, हम लोग एक पेड़ के नीचे बैठ गए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मेरे छोटे बच्चे ने भूख से तड़पते हुए कहा—"पिता जी ! मैं भूख से मरा जा रहा हूँ । मेरी जान बचाइए ।" फिर तो मैं पुत्र की मरती दशा से अधीर हो उठा । मेरा दिल फटने लगा । वहाँ पर कुछ न पा कर, मैंने लकड़ी बटोर कर आग जलाई और जलती आग में पड़ता हुआ बोला—"बेटा ! तू मेरा मांस खा कर अपनी जान बचा ।"

राजा लवण आगे बोले—प्रिय दरबारियों ! आग से जलने पर मेरी नींद टूटी है । अब मैं अपने को पूर्ववत् राजा लवण पाता हूँ ।"

प्रिय राम ! जादूगर चुप-चाप बैठा था । समस्त दरबारी व्याकुल खड़े राजा की बीती सुन रहे थे । राजा लवण को आश्चर्य हुआ कि सिर्फ दो घड़ी में इतनी लम्बी जीवन-घटना कैसे घटी ? उन्होंने ने जादूगर से पूछा—"भाई जादूगर ! बात कैसी है ? बताओ !"

जादूगर ने कहा—"महाराज ! सभी घटनाएँ सही घटी हैं । विश्वास न हो तो जाकर आँखों देख लीजिए ।"

इतना कह कर, जादूगर अन्तर्धान हो गया । सभी दरबारी चकित रह गए ।

फिर, राजा लवण अपनी सेना के साथ, दक्षिण दिशा को रवाना हुए । जिस रास्ते से घोड़ा उन्हें ले गया था—उसी ओर बढ़ते गए । जो कुछ घोड़े की पीठ पर से उन्होंने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

देखा था—सो सब सही मिला। वह पेड़ भी मिला जिसकी डाल पकड़ कर झूल गए थे।

उनकी चाण्डाल-पत्नी, सास, ससुर, लड़के-बच्चे सभी मिले। उसी झोपड़ी में सभी उनकी मृत्यु का शोक मना रहे थे। राजा ने उन्हें नाना तरह से समझा कर, धीरज बंधाया और बहुत धन देकर खुश किया। फिर राजा, राजधानी वापस आकर राज्य करने लगे।

प्रिय मित्र ! हम लोगों का मन खुद बड़ा भारी जादूगर है। अत्यन्त चंचल है। दूर-दूर तक दौड़ लगाता है। कहीं भी मुश्किल से टिकता है। उड़ान खूब मारता है। पल में दूर-दूर देशों का सैर कर आता है। अपने प्रिय जनों से मिल-जुल आता है। अभी मैं इधर लिखता रहा हूँ—उधर मेरा मन आप के पास दौड़ लगाता रहा हैं, चकराता व आप के इर्द-गिर्द मड़राता रहा हैं। आप को मालूम होता हो, चाहे नहीं, पर यह सही है।

प्रिय मित्र ! स्वर्ग-नर्क मोक्षादि का कारण भी मन ही होता है। इसे कुविचारों से हटा कर, सद् विचारों में लगावें। कुठांव जाने से रोकें। जहाँ-जहाँ जाय, वहाँ-वहाँ से वापस ला, इसे काबू में रखने का प्रयास करें। अभ्यास करते-करते, कभी न कभी, मन वश में हो ही जाएगा। फिर, तो परम धाम की मंजिल तय ही समझिए।

इस प्रकरण की अन्य बातों की चर्चा, अगले पत्र में होगी। तब-तक के लिए बिदा लेता हूँ।

आप सदा स्वस्थ व प्रसन्न रहें; सपरिवार फूलते-फलते रहें; दुनिया की खुशियाँ आप के चरण चूमें;—ये ही मेरी कामनाएँ हैं; ये ही मेरी दुआएँ हैं; ये ही आप के लिए, मेरी सूक्ष्म भेंट है।

मेरे प्यारे मित्र ! यह तन दीन-दुखियों के कुछ भी काम आ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाय !—तो जीवन सफल समझिए। इनके लिए, दिल का द्वार हमेशा खुला रखिए। तन,-मन,-धन से जो कुछ भी सेवा बन पड़े अवश्य किया कीजिए। कुछ न हो सके तो दो मीठी बातें ही कर, उनके दिल का दर्द हलका कीजिए। बस, इतने मात्र से ही जीवन-नौका सही सलामत पार लग जाएगी।

पुनः प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

प्रिय मित्र !

जमशेदपुर
१३-१२-६६
साढ़े ८ बजे रात

सादर प्रणाम !

इस उत्पत्ति-प्रकरण के पिछले सभी पत्रों में मन के स्वरूप, इसकी अद्भुत शक्ति आदि का वर्णन हुआ है। जीव वासना वश ही नाना योनियों में भ्रमता रहता है—वासनानुसार ही उसके संगी-साथी भाई-बन्धु पति-पत्नी आदि मिलते हैं—इत्यादि की भी चर्चा की गई है। आगे बढ़ने के पहले, सब पर विहंगम दृष्टि डालते—एक बार सरसरी निगाह से देख लें। मेरे प्यारे मित्र ! पढ़े विषयों को बीच-बीच में दुहराते अवश्य जायँ।

आज मैं आप को महर्षि वशिष्ठ के मुख से मधुर बाल--कथा सुनवाता हूँ। यह संसार भी इस कथा की तरह निरा काल्पनिक ही है—यह तो, वास्तव में उपजा ही नहीं आदि बातों का भान सहज में कराता हूँ। आप सुनते जाइए।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! यह जगत बाल-कथा की तरह निरा काल्पनिक है। इसकी कोई सत्ता नहीं है।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! वह बाल-कथा मुझे सुनाइए।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

बाल-कथा

प्रिय राम ! किसी समय, एक बालक ने एक दाई से

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कहा—"दाई ! आज एक ऐसी कहानी कहो जो कभी हुई ही न हो।"

दाई बहुत चतुर थी। उसने कहा—"अच्छा, पुत्र ! सुन—

पुराने जमाने में शून्य नामक एक नगर था। उसके राजा बड़े प्रतापी थे। उनके तीन पुत्र थे—जिनमें दो जन्मे ही न थे और एक तो अभी गर्भ में भी नहीं आया था। तीनों पुत्र बहुत सुन्दर और चरित्रवान थे।

सयाने होने पर, तीनों राजकुमार विदेश को चले। तेज धूप में राह चलते-चलते जब वे बहुत थक गए तब तीनों ने तीन वृक्षों के नीचे बैठ कर, एकान्त में आराम किया। उन वृक्षों के मधुर फल खाए, तथा उनके फूलों की मालाएँ पहनी। उन तीनों वृक्षों में, मेरे लाड़ले पुत्र ! मुख चूमती हुई दाई बोली—वास्तव में दो तो उपजे ही न थे और एक का तो अभी बीज भी नहीं बोया गया था।

कुछ देर वृक्षों की शीतल छाया में विश्राम कर, तीनों राजकुमार आगे बढ़े। कुछ दूर जाने पर, राह में उन्हें तीन नदियाँ मिलीं। तीनों की जल-धारा तेज थी। जल निर्मल और मधुर था। तरंगे मन मोहक थीं। तीनों राज, कुमार उनमें नहाए। खूब तैरे और उनका जल-पान कर तृप्त हुए। लेकिन पुत्र ! उन तीन, नदियों में, दो में तो बिलकुल जल नहीं था और एक सूखी पड़ी थी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! कहानी उस बालक को बहुत अच्छी लगी उसने दाई से कहा—"आगे क्या हुआ ?—सो भी कहो ?"

दाई बोली—पुत्र ! नदी में नहा-धोकर, तीनों राजकुमार आगे बढ़े। चलते-चलते शाम को वे भविष्यपुर नामक एक सुन्दर नगरी में पहुँचे।

उस भविष्यपुर नगरी में उन्हें तीन ख़ाली मकान टिकने को मिले—जिनमें दो तो अभी बने ही न थे और तीनों में न एक भी दीवार ही थी, न छत ही। वहाँ, रात्रि में, तीनों राजकुमारों ने तीन ब्राह्मणों को तीन थालियों में भोजन कराया। उन तीन ब्राह्मणों में—दो के शरीर ही न थे और तीसरे को मुँह भी नहीं था। और उन तीन थालियों में दो की तली (पेंदा) न थीं और एक चूर्णरूप थी। भोजन कर ब्राह्मण बड़े प्रसन्न हुए। और दान-दक्षिणा ले अपने-अपने घोर गए।

दाई आगे बोली—

प्रिय पुत्र ! तीनों राजकुमार वहीं—भविष्यपुर नगरी में—बस गए। वे अभी भी वहीं रहते हैं।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! उस अबोध बालक को कथा बिलकुल सच्ची प्रतीत हुई। वह सुन कर, बहुत खुश हुआ। यह दुनियाँ भी दाई की बाल-कथा की तरह निरा मन गढ़न्त है। यह तो वास्तव में बनी ही नहीं। जिस प्रकार, अबोध

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बालक को झूठी कहानी सही मालूम हुई, उसी प्रकार अज्ञानियों को यह काल्पनिक संसार सही भासता है। ज्ञानियों को यह संसार नहीं भासता।

प्रिय मित्र ! यह दुनिया जो प्रत्यक्ष दीखती है; वह उपजी ही नहीं; यह तो निरा काल्पनिक है—इन बातों से भ्रमित न होइएगा।

मेरे प्यारे **मित्र** ! अगले पत्र में मैं ज्ञान की सात भूमिकाओं की चर्चा करूँगा। फिर, सब कुछ साफ हो जाएगा।

दर असल, ऊट-पटाँग विषय आने से मैं खुद गहरी चिंता में पड़ जाता हूँ कि ये तो आप को उलझन में डालेंगे। विषय को स्पष्ट करना तो मेरे ही जिम्मे है—उससे मैं अपने को दोषी पाने लगता हूँ।

अगले पत्र की प्रतीक्षा करें। सुनते हैं—प्रतीक्षा मधुर होती है। आप को शायद अनुभव हो ! मधुर होती है, पर बहुत लम्बी होने पर असत्य हो जाती है ! इसका भी ख्याल रखिएगा।

आप का आतमरूप

गणेश

१६-१२-६६

पाँच बजे भोर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उत्पत्ति-प्रकरण

जमशेदपुर

प्रिय मित्र, १७-१२-६६

सादर प्रणाम !

अभी उत्पत्ति-प्रकरण की चर्चा चलती आ रही है। आगे महर्षि वशिष्ठ जी से जीव, ज्ञानादि के बारे में कुछ सुनिए—

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! सभी जीव ब्रह्मा से वैसे ही उपजते हैं, जैसे जल से लहरें, दीपक से रोशनी, तथा सूर्य से उसकी किरणें। और सद्ज्ञान से सब का लाभ हो जाता है; अर्थात् ब्रह्म में मिल कर ब्रह्म रूप हो जाता है। जन्म-मरण से छुटकारा पा जाता है।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! जिस ज्ञान से जीव ब्रह्म रूप हो जाता है— उसे विस्तार में बताइए।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! शुभेच्छा, विचारणा, तनुमानसा, सत्वापत्ति, असंसक्ति, पर्दाथाभावना और तुर्यगा—ये ज्ञान की सात भूमिकाएँ हैं। साधक के चित्त की स्थिति ही, ज्ञान-भूमिका के नाम से कही गई है। जैसे-जैसे साधना में प्रगति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होती जाती है, साधक की चित्त-स्थिति, वैसे-वैसे, बदलती-बदलती, अंतिम अवस्था-तुर्यगा—में पहुँच जाती है। तब उसे ब्रह्म का भान हो जाता है। वह जीवन-मुक्त हो, ब्रह्म में विचरने लगता है। प्रत्येक ज्ञान-भूमिका के बारे में अब तू, प्रिय पुत्र! अलग-अलग सुन :—

१. **शुभेच्छा**—मैं संसार में मूढ़ होकर क्यों रहूँ! क्यों नहीं, शास्त्र व सत्संग से ज्ञान प्राप्त कर, मोक्ष को प्राप्त करूँ!—आदि वैराग्य पूर्ण विचारों के मन में उदय होना, ज्ञान की प्रथम भूमिका—शुभेच्छा—कहलाती है।

२. **विचारणा**—शुभेच्छा की अवस्था में, साधक के मन में सद् विचार उदय होते हैं। फिर, शास्त्रों के अध्ययन, मनन, संतो की संगति, वैराग्य तथा अभ्यास से उसके चित्त में सदाचार की ओर, बढ़ने की प्रवृति होती है—यही साधक के ज्ञान की दूसरी भूमिका—विचारणा—कहलाती है।

३. **तनुमानसा**—शुभेच्छा और विचारणा के अभ्यास से जैसे-जैसे साधक का चित्त कुछ साफ होता जाता है; वैसे-वैसे उसे अनायास विषय-भोगों से विरक्ति होती जाती है। फलत: उसके चित्त की चंचलता घटती जाती है—यही उसके चित्त की तीसरी अवस्था है जो ज्ञान की तीसरी भूमिका—तनुमानसा—कहलाती है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

४. सत्त्वापत्ति—विषयों से विरक्ति होने पर, साधक का शुद्ध चित्त, आत्मा में स्वतः स्थिर होने लगता है—यही उसके चित्त की चौथी अवस्था है, जो ज्ञान की चौथी भूमिका-सत्त्वापत्ति—कहलाती है।

५. असंसक्ति—सांसारिक विषयों से विरक्ति हो जाने पर, ब्रह्म में साधक के मन का स्थिर होने लगना ही ज्ञान की पाँचवीं भूमिका-असंसक्ति कहलाती है।

६. पदार्थ अभावनी—चित्त की उपर्युक्त पाँचों अवस्थाओं में जब साधक का अन्तःकरण बिल्कुल निर्मल होकर, भगवान् में ही लीन होने लगता है, तब उसे संसार के सभी पदार्थ असत्य प्रतीत होने लगते हैं। उसके अन्तःकरण में वस्तुओं के अभाव की भावनाएँ उदय होने लगती हैं यानी उसे प्रतीत होने लगता है कि ब्रह्म के सिवा और सब कुछ मिथ्या है। साधक के चित्त की यही छठवीं अवस्था है—जो ज्ञान की छठी भूमिका-पदार्थभावनी—कहलाती है।

७. तुर्यगा—जब साधक, चित्त की उपर्युक्त छवों अवस्थाओं को पार करता हुआ, सातवीं अवस्था-तुर्यगा—में प्रवेश कर जाता है, तब उसका मत ब्रह्म में अविचलित रूप से पूर्णतया लीन हो जाता है। फिर, उसे यह संसार-प्रपंच नहीं भासता। दुनिया उपजी ही नहीं—निरा काल्पनिक है—उसे तब ही भान होता है अन्यथा इसका बोध नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होता यही साधना की अंतिम अवस्था है, जो ज्ञान की सातवीं भूमिका—तुर्यगा—कहलाती है। उस अवस्था में सब कुछ ब्रह्ममय दीखता है।

और **प्रिय राम** ! जो शास्त्रों के पठन-पाठन, चर्चादि से पुस्तकीय ज्ञान सिर्फ धन यशादि-कमाने भर के लिए ही करता है, उन्हें आचरण में लाने का प्रयास नहीं करता है—वह ज्ञान-बन्धु कहलाता है। उस किताबी ज्ञान से, उसके आचरण पर कुछ असर नहीं पड़ता। उससे तो अच्छा अज्ञानी ही है।

प्रिय राम ! आत्मा की जानकारी ही वास्तविक ज्ञान है। अन्य प्रकार के ज्ञान मात्र से सार वस्तु ब्रह्म का भान नहीं होता। और ज्ञान-बन्धु शास्त्रों की जानकारी, किताबी ज्ञानादि से संतुष्ट हो जाता है। प्राप्त ज्ञान को जीवन में उतारने का प्रयास नहीं करता।

प्रिय राम ! जो साधक, पढ़े, सुने ज्ञान को एकाग्र चित्त से, बिना किसी प्रकार के फल की आशा के निष्काम भाव से—अपने जीवन में उतारता है—वही ज्ञानी है। जो ज्ञान-प्राप्ति के फलस्वरूप अपने नियत कर्मों को बिना किसी वासना के करता है—वही ज्ञानी है। जिसकी तृष्णाएँ मर चुकी हैं तथा जिसकी शीतलता वास्तविक है—वही ज्ञानी है। जिसका मन इतना निर्मल और वासना

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहित हो गया हो कि पुनर्जन्म की संभावना ही न हो—वही ज्ञानी है ।

खाना-पीना, पहनना-ओढ़ना, लेना-देना आदि कर्म तो जीविका मात्र हैं । समयानुकूल जो बिना किसी संकल्प के शांत हृदय से अपने नियत कर्मों को करता है—वही ज्ञानी है ।

प्रिय मित्र ! उत्पत्ति-प्रकरण की चर्चा समाप्त हुई । अगले पत्र में स्थिति-प्रकरण की चर्चा होगी ।

हम लोग ज्ञान की सातों भूमिकाओं पर गौर करें और विचारें कि स्वयं किस भूमिका में पहुँचे हैं । साधना में आगे बढ़ने का अथक प्रयास करें ।

ज्ञान की उपर्युक्त सात भूमिकाएँ यानी चित्त की सात स्थितियाँ परम धाम पहुँचने के सात सोपान (सीढ़ियाँ) हैं एक-एक को पार करता हुआ, ब्रह्म-भवन में हम लोग प्रवेश कर सकते हैं ।

प्यारे **मित्र** ! एक बात और यहाँ साफ-साफ कह देना चाहता हूँ—

चित्त-शुद्धि के बिना योगवाशिष्ठ के गूढ़ ज्ञान समझ में न आएंगे । केवल, पढ़ने, सुनने, उपदेशों के रटने से कुछ लाभ न होगा । आचरण में लाने से ही आध्यात्मिक क्षेत्र में कुछ प्रगति होगी अतएव, पढ़ने के साथ-साथ योगवाशिष्ठ के अनमोल उपदेशों को आचरण में लाते जायँ, जीवन में उतारते व उनके अनुरूप अपने को ढालते जाँय । तभी हम लोगों की यह धर्म-चर्चा सफल । अन्यथा परिश्रम बेकार तथा समय का भी दुरुपयोग !

आप की साधना फलवती हो ! आप जीवन-मुक्त हो, संसार में सुख से विचरें ! ! सदा स्वयम् प्रसन्न रह, सब में प्रसन्नता बिखेंरे ! ! !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

खुद खुश रह खुशियाँ जी भर बाटें। लोगों से मुस्कुरातें मिलें, रहे वैसे ही; बिछुड़े वैसे ही। लेकिन प्रेम के आँसू आएँ तो बेशक आने दें। दुःख-दर्द व बेकसी की हरगिज नहीं।

प्रिय मित्र! इस सम्बन्ध से अपने जीवन की एक दिलचस्प घटना याद आई है। जरा सुन लीजिए—घटना सन् १९३९ के शुरू की है; जब मैं सर पर, बेकारी की भारी गठरी लेकर घर से जमशेदपुर आया। संयोगवश, ग्राम फूलवारी, पो० मिसरिख जिला सीतापुर, उत्तर प्रदेश के निवासी, श्री रामरतन मिश्र जी से परिचय हुआ। आप साकची (जमशेदपुर) के लोअर स्कूल में प्रधान शिक्षक थे। आप अत्यन्त सरल, सच्चा व स्पष्ट बोलने वाले।

मिश्र जी ने अपनी स्कूल लाईब्रेरी से आकर्षण-शक्ति नामक एक पुस्तक पढ़ने को दी। पुस्तक बहुत शिक्षाप्रद व जोशीली थी। मैंने उसे दो-तीन बार पढ़ा। उसकी निम्नाङ्कित पंक्तियों से मैं बहुत प्रभाविन हुआ--

'आदर्श पुरुष वही है, जो दूसरों को दुःखी देख कर या स्वयम् दुःख पाकर, कभी मुख से आह नही निकालता और जो अपनी जीवन-यात्रा में कभी असत्य का आश्रय नहीं लेता!'

"आकर्षण-शक्ति, लेखक पं० गुलाब रत्न वाजपेयी, 'गुलाब' पृष्ठ ५१ से उद्धृत।"

मैंने उपर्युक्त पंक्तियों को अपने निजी गुप्त डायरी में दिनांक ८-७-३९ को अंकित किया है। डायरी से ही उद्धृत कर रहा हूँ।

सही माने में, उन्हें जीवन में उतारने का भगीरथ-प्रयत्न, मैंने शुरू किया। मेरे पास बहुत से प्रशंसापत्रादि थे--जो नौकरी, सहानुभूति आदि पाने के काम में लाए जा सकते थे। मैंने सब को एकत्र कर, उसी दिन सलाई लगा दी। सब जल गए। अब, मुझे अपने पैर पर खड़ा होने तथा अपने बाहु-बल पर भरोसा करने की प्रेरणा मिली।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

बहुत दिनों तक, उपर्युक्त पंक्तियों को, मैं अपनी निजी डायरी में लिखता गया। मैं अपने जीवन में इन्हें कहाँ-तक उतार सका ? इसका फैसला आप कीजिए ! मेरी निजी डायरियों को तो आपने पढ़ा ही है। आप से कुछ गोपनीय नहीं रखा है।

जिन्दगी **मित्र** ! ख़ुशी से जीने के लिए है। हम-आप, जीवन-संग्राम में ख़ुशी-ख़ुशी भिड़ने व जूझने के लिये हैं।

बहुत दूर भटक गया। बस, अब बिदा लेता हूँ।

पुनः प्रणाम।

आप का आत्मरूप
गणेश

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्थिति-प्रकरण

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

२१-१२-६५

सादर प्रणाम !

पिछले पत्रों में उत्पत्ति-प्रकरण की चर्चा हो चुकी है। स्थिति-प्रकरण की चर्चा शुरू की जाती है।

इस प्रकरण में उत्पत्ति-प्रकरण के विषयों को ही विस्तार में बताया गया है। सच पूछिए—तो एक प्रकार से पुनरुक्ति है। इस प्रकरण का सारांश निम्न प्रकार का है :—

यह जगत चित्र-बाग-छवि की तरह है। जैसे छवि नीरस व गंध रहित होती है वैसे ही जगत बिना रस व बिना खुशबू का है। अज्ञान वश ही सही भासता है और भ्रम वश ही रस व गंधमय प्रतीत होता है। यह मन की रचना मात्र है। मन के लय होने से, इसका भी लोप हो जाता है। फिर, चित्त ब्रह्म में अविचल रूप से स्थिर हो जाता है। ब्रह्म चित्त स्थिर होने का नाम जीवन-मुक्ति है।

ब्रह्म में चित्त के अविचल रूप से स्थिर हो जाने पर, मन के सारे व्यापार खतम हो जाते हैं। अंतःकरण बिलकुल शांत हो जाता है। किसी प्रकार की उथल-पुथल नहीं होती। बड़ी से बड़ी, घटनाएँ, कठिन से कठिन समस्याएँ आदि भी उसे विचलित नहीं कर पातीं। वह तो निरंतर आनन्दमय ब्रह्म में विभोर रहता है। बाहरी दुनियाँ में कुछ भी हो जाय उसका असर, उसके चित्त पर जरा भी नहीं होता।

प्रिय मित्र ! ब्रह्म में लीन व्यक्ति भी, ऊपर से देखने पर, अन्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सांसारिक लोगों की तरह ही चलता है। शरीर कायम, रखने के लिए वह खाता-पीता है; पहनता-ओढ़ता है; आमोद-प्रमोद भी करता है। फरक इतना ही है कि उनका असर उसके आन्तरिक जीवन पर, कुछ नहीं होता।

देखने में, उस पर भी विपत्तियाँ आती हैं—उसे भी अपने लोगों से बिछुड़ना होता है। उसके जीवन में, भी हेर-फेर, उथल-पुथल होते हैं। दूसरों के नजर में ऊपर से वह भी दुःखी दीख सकता है; परन्तु वास्तव में उसके चित्त पर, कुछ असर नहीं होता। उसका मन तो निरंतर आनन्द-मूर्त्ति ब्रह्म में ही रमा रहता है। उसके लिए क्या दुख ! क्या सुख !! सब बराबर।

मिथिला के राजा जनक, जिनकी चर्चा हुई है और आगे भी होगी—ब्रह्म ज्ञानी थे। उनका मन बराबर ब्रह्म में ही रमा रहता था। किसी प्रसंग पर उन्होंने कहा था—'प्रिय मिथिला वासियों ! मिथिला की उन्नति से, मुझे न खुशी होती है और न इसके जल कर भस्म होने से दुःख ही होगा।' प्रिय मित्र ! चित्त की इस स्थिति का ही नाम-जीवन-मुक्ति-है। यही जीवन की अंतिम सफलता है।

अब विषय-प्रसंग पर आवें।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! वासनावश ही जीव जन्म-मरण के बंधन में बंधता है। मरने के बाद उसकी गति भी वासनाओं के अनुकूल ही होती है। भोग-वस्तुओं में वासना बनी रहने से, उनको भोगने के लिए पुनर्जन्म अवश्य होता है। जिसमें जिसकी निष्ठा बनी रहती है, जिसे पाने की कामना बलवती रही है, उसे वह जन्म-जन्मातर तक पाता रहता है। भृगु-पुत्र शुक्र को वासनावश ही, उनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रेमिका अप्सरा अनेक जन्मों व भिन्न-भिन्न योनियों में मिलती रही।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरु देव! भृगु-पुत्र शुक्र की बीती सुनाइए!

महर्षि वशिष्ठ बोले—

भृगु-पुत्र शुक्र की कथा

प्रिय राम! एक समय मन्दरा चल पर्वत पर, भृगुमुनि तप करने लगे। उनकी सेवा में, उनके पुत्र शुक्र जी लगे। कुछ दिनों के बाद, भृगु मुनि निर्विकल्प समाधि में स्थित हो गए—अर्थात् ध्यान में डूब जाने से अचेत हो गए। तब शुक्र जी को कुछ फुरसत हुई। वे एकान्त में बैठ कर, बन की मनोहर शोभा देखने लगे।

इतने में आकाश-मार्ग से जाती हुई, एक सुन्दर अप्सरा को उन्होंने देखा। देखते ही वे उस पर मोहित हो गए। वह उनके मन में समा गई। उसे पाने की वासना जाग उठी।

शुक्र जी ने, मन ही मन, सोचा—,अप्सरा जरूर ही, इन्द्र-लोक की होगी! इससे वहाँ जाना चाहिए।"

प्रबल वासनावश, तब वे (शुक्र जी) सूक्ष्म शरीर से इन्द्र-लोक गए। उनका जीव भर ही वहाँ गया। देह वहीं, भृगुमुनि के पास मृतक रूप पड़ी रही।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इन्द्र-लोक में पहुँचने पर, वहाँ के राजा इन्द्र ने उनकी बड़ी खातिर की। सभी प्रकार के भोग-विलास का प्रबन्ध किया। लेकिन, शुक्र जी का मन किसी में न लगा। वे उस अप्सरा की ही तलाश करते रहे। वही उनके मन में बसी रही।

संयोगवश, एक दिन, अचानक उससे भेंट हो गई। आँखें चार होते ही, दोनों प्रेम-सूत्र में बंध गए। बहुत समय तक साथ रहे, दोनों सहवास-सुख भोगते रहे। लेकिन तृप्ति न हुई। इतने में, दोनों की पुण्य-कमाई समाप्त हुई और वे इन्द्र-लोक से गिर गए।

कुछ समय तक दोनों के सूक्ष्म शरीर चन्द्रमा की किरणों में टिके रहे। फिर शुक्र जी दशारण्य ब्राह्मण के पुत्र हुए और अप्सरा मालवा देश के राजा की पुत्री हुई। जब, वह सोलह वर्ष की हुई, तो राजा ने उसकी शादी के लिए स्वयंवर रचा।

स्वयंवर में दूर-दूर के राजे-महाराजे आये। कुतूहल वश ब्राह्मण-पुत्र (शुक्र जी) भी आए। नजरें मिलते ही, पूर्वजन्म के संस्कार उदय हो गए। सुसुप्त पूर्व वासनाएँ जाग उठीं। पल में प्रीति हुई और राजकुमारी ने गरीब-ब्राह्मण-बालक (शुक्र) के गले जयमाला डाल दी।

दोनों विवाह सूत्र में बंध गए। कुछ दिनों के बाद राजा अपने दामाद शुक्र को राज्य देकर, तप करने जंगल

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चले गए। फिर, शुक्र जी बहुत समय तक, राज तनया यानी अपनी पुरानी प्रेमिका अप्सरा के साथ राज-सुख भोगते रहे।

समय आने पर, शुक्र जी मर कर, अपनी वासना के अनुकूल बंगाल के मल्लाह परिवार में जन्मे। फिर अगले जन्मों में एक-एक कर-सूर्यवंशी राजा हुए, विद्वान् गुरु हुए, विद्याधर हुए, मद्रास के राजा हुए, त्रिगर्त देश में गधा हुए। किरात देश में बाँस होकर उपजे। चीन के जंगल में हिरण हुए। सर्प होकर, ताड़ के वृक्ष पर बास किए। बन मुर्गा आदि हुए। अपनी वासनावश ही भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मे। अन्त में, ब्राह्मण कुल में जन्म ले, तप करने लगे।

इधर बहुत समय बीतने पर, भृगु महर्षि की समाधि खुली तो उन्होंने अपने पुत्र शुक्र की लाश पड़ी देखी। उन्हें काल पर क्रोध आ गया और शाप देने पर उतारू हो गए। तब काल प्रकट हो बोला—

महाराज ! मैं तो भगवान् का तैनात किया हुआ हूँ। सब कुछ, तो जीव के वासनानुकूल ही होता है। अपनी वासनावश ही जीव भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मता है। मैं तो सिर्फ जीव की देह को ही बदलता रहता हूँ। जीवों के जन्म-मरण में मेरा कोई हाथ नहीं है। महाराज। मैं बेकसूर हूँ। नाहक मुझे क्यों शाप देंगे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

महाराज ! आप के पुत्र शुक्र अपनी वासना वश अनेक योनियों में जन्मते रहे हैं। अभी वे ब्राह्मण कुल में जन्मे तो, गंगा तट पर तपस्या कर रहे हैं।

तब ऋषि भृगु काल के साथ गंगा तट गए। वहाँ अपने शुक्र को ब्राह्मण-कुमार के रूप में तप करते पाया। पर उसने इन्हें पहचाना नहीं। तब भृगु ऋषि ने उनके पूर्व जन्म की याद दिलाई और ध्यान से देखने को कहा। ध्यान से देखने पर, ब्राह्मण-पुत्र को अपने पूर्व जन्मों की याद आई। ऋषि भृगु-पुत्र होने की वासना पुनः जाग उठी। फलतः उनका जीव, उनके मन्दरा चल पर्वत पर पड़े शरीर में प्रवेश कर गया और वे जी उठे।

प्रिय राम ! वासना वश ही शुक्र जी नाना योनियों में भ्रमते रहे। वासना वश ही उनकी प्रेमिका-अप्सरा-अनेक जन्मों में उनकी चिर संगिनी बनती रही।

प्रिय मित्र ! पत्र काफी लम्बा होता जा रहा है। एक बार पढ़ने में आप को कष्ट होगा। अतएव, उस प्रकरण के अन्य बातों की चर्चा अगले पत्र में होगी।

विदा लेने के पहले, आप से कुछ और निजी बातें करने के लिए जी मचलता है। मेरे प्यारे मित्र ! मेरी बात मानिए—मन को भगवान् में पिरोइए; उन्हीं की नींद सोइए उन्हीं की नींद जागिए। न उलझन में पड़िए न घबड़ाइए। पकड़िए पल्ला कस कर, उनकी। बस, बेड़ा पार। उपदेश सुनते, पढ़ते मनसूबा बाँधते-बाँधते तो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उम्र बीत चली। कहाँ, कुछ प्राप्त हुआ ? अब तो विचारी देह भी थकने लगी। किसी ने कहा है न—

यमराज की विमल ध्वजा, दृष्टि में आती है।
करती हुई युद्ध रोगों से, देह थकती जाती है।।

पुनः प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्थिति-प्रकरण

प्रिय मित्र ! **जमशेदपुर**

२२-१२-६६

सादर प्रणाम !

पिछले पत्र में, भृगु-पुत्र शुक्र की कथा कही गई है। आज दासूर मुनि की मनोरम कथा सुनाई जाएगी।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! भोगों में निष्ठा बनी रहने से वासनाएँ जोर पकड़ती हैं। वासनाओं के चलते, मन में तरह-तरह के संकल्प उठते हैं। मन के संकल्प ही काल्पनिक सृष्टि की रचना करते हैं। भोगों से विरक्ति होने पर, वासनाएँ क्षीण होती हैं। वासनाओं के क्षीण होने से, मन निःसंकल्प होकर, शांत हो जाता है। फिर जीव को संसार नहीं भासता। एक बार, मैंने दासूर मुनि को बन-पुत्र से ऐसा ही कहते सुना था !

तब श्री राम चन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! मुझे दासूर मुनि और बन-पुत्र की संवाद-वार्त्ता सुनाइए।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

दासूर-मुनि और बन-पुत्र की वार्त्ता

प्रिय राम ! दासूर मुनि मगध देश के सरलोमा मुनि के पुत्र थे। उनके पिता उन्हें बहुत प्यार करते थे। एक रोज, सरलोमा मुनि चल बसे। दासूर मुनि बहुत दुःखी हो, फूट-फूट कर रोने लगे। एक बन देवी को उन पर बहुत दया आई। देवी जी अदृश्य (छिपी) रहती हुईं ही उन्हें भाँति-भाँति से समझाने लगीं।

बनदेवी जी बोलीं—

ब्राह्मण पुत्र ! तू अपने पिता की मृत्यु से इतना दुःखी क्यों होता है ! कोई नयी बात तो हुई नहीं है। बाप तो सब के मरते हैं—तेरे भी मरे हैं। संसार में जो भी जन्मता है, वह एक-न-एक दिन अवश्य ही मरता है। जन्म लेकर मरना तो संसार का अटल नियम है। जिसको इसकी जानकारी नहीं होती, वही अबोध बालक की भाँति रोता है।

प्रिय वत्स ! तू अबोध बालक न बन ! पिता की मृत्यु का शोक नाहक मत कर। अपना अनमोल समय वृथा शोक करने में न गवाँ ! उठ ! धीरज धर, अपना परलोक बना।

प्रिय राम ! (महर्षि वशिष्ठ बोले) बन देवी की बातों से दासूर जी को होश आया। वे मन ही मन विचारने लगे—"बन देवी जी, ठीक ही तो कहती हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अब मेरे रोने-कल्पने से पिता जी थोड़े जी उठेंगे ! अपनी दुनिया क्यों गवाई जाय। ठीक ही तो कहती हैं—सब के पिता तो मरते ही हैं।"

इतना सोच कर दासूर जी, घन घोर जंगल में तप करने लगे। तप से उतकी चित्त-वृत्तियाँ शान्त हो गईं। आहिस्ते-आहिस्ते आत्म-बोध हो गया—ब्रह्मवत् आत्मा होने का—उन्हें भान हो गया। देह से नाता टूट आत्मा से जुड़ गया। फिर, वे निमग्न, हो विचरने लगे।

एक दिन, एक बन देवी, दासूर ऋषि के पास रोती-बिलपती आई और बोलीं—

ऋषि देव ! गत चैत्र शुल्कपक्ष की त्रयोदशी को इन्द्र के नंदन बन में काम देव का जलसा था। सभी देव-देवियाँ आमंत्रित थीं। सबों ने भाग लिया। जलसे में मैं भी शामिल थी। सबों ने खूब खुशियाँ मनाईं। सिर्फ मैं ही भीतर-भीतर दुःखी थी।

तब मुनीश्वर दासूर बोले—

देवी ! तू अपने दुःख का कारण बता।

बन देवी बोलीं—

पूज्य मुनीश्वर ! जलसे में आयी; सभी देवियाँ पुत्र-वती थीं। वे अपने लाड़ले पुत्रों के साथ नाना तरह के किलोलें करती थीं। मैं ही एक अभागिन निपुत्री थी। मुनीश्वर ! मुझे निपुत्री होने का शोक सहा नहीं जाता।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आप को सब सिद्धियाँ प्राप्त हैं। आप मुझे पुत्रवती कर, मेरा शोक दूर कीजिए, वरना मैं आग में जल मरूँगी।

बन देवी, पर मुनीश्वर दासूर को दया आ गई। उन्होंने एक फूल देते हुए कहा—"जा, इसे लेजा ! तुझे एक माह में ही पुत्र उत्पन्न होगा। पुत्र सर्वांगसुन्दर होगा—लेकिन तू ने अग्नि में जल-मरने की धमकी दी थी— इससे तेरे पुत्र को सहज में आत्म-ज्ञान न होगा। उसे आत्म-ज्ञान का उपदेश ज्ञानी गुरु से लेना पड़ेगा। युक्ति-युक्त ज्ञानोपदेश से ही उसे आत्म-बोध होगा।

प्रिय राम ! इतना कह, दासूर मुनि ने बन देवी को विदा किया। वे बन-देवियों के साथ रहने लगीं। समय आने पर, उन्हें सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ। उनने उसे बड़े प्यार से पाला और और समस्त विद्याएँ सिखलाईं !

जब बालक कुछ बड़ा हुआ, तब वे उसे दासूर मुनि के पास ले गईं। पुत्र सहित उनके चरणों में पड़ बोलीं—

"मुनीश्वर ! पुत्र आप हम दोनों का है। मैंने इसे सांसारिक विद्याएँ सिखला दीं। आत्म-ज्ञान सेवा अभी बाकी है। आप अपने उपदेश से आत्म-बोध कराइए।"

मुनीश्वर दासूर प्रसन्न हो, बन-देवी-पुत्र को आत्म-ज्ञान का उपदेश देने लगे—

महर्षि वशिष्ठ कहते गए—

प्रिय राम ! एक दिन, जब मैं आकाश-मार्ग से गंगा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

स्नान के लिए जा रहा था—तो दासूर मुनि को बन देवी के पुत्र को उपदेश देते सुना। वे कह रहे थे,—"संकल्प से ही संसार की रचना होती है, संकल्प के लय होने से संसार का भी लोप हो जाता है यानी सब कुछ ब्रह्ममय ही दीखने लगता है। फिर, तो मन शांत हो, ब्रह्म में लीन हो जाता है।"

कच-गीता-वृत्तान्त

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! तुझे, मैं, अब, कच-गीता का वृत्तान्त सुनाता हूँ—

किसी समय, सुमेरू पर्वत के घन घोर जंगल में, देव गुरु वृहस्पति के पुत्र-कच जी—तप कर रहे थे। वासनाओं के त्याग से उनका चित्त निर्मल हो गया था। वे ब्रह्म-चिन्तन में लगे थे।

उन्हें सहसा ब्रह्म का आभास हुआ। उनका मन ब्रह्म में विभोर हो गया। उनकी सहज समाधि लग गई। वे अचेत हो पड़े रहे।

प्रिय राम ! कुछ समय के बाद, जब कच जी की समाधि खुली तब उन्होंने ब्रह्म के बारे में निम्न प्रकार से कहा था—

"सारा विश्व ब्रह्म से वैसे ही परिपूर्ण है; जैसे महा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लय के बाद जल से हो जाता है। कोई भी स्थान नहीं जहाँ ब्रह्म न हो। कोई चीज ऐसी नहीं जिसमें ब्रह्म न हो।

मेरे भीतर भी ब्रह्म है। मेरे बाहर भी ब्रह्म है। मैं खुद ब्रह्म मय हूँ। सभी दिशाओं में, सब ओर, सब ठौर सर्वत्र ही ब्रह्म है।

सुख भी ब्रह्म है, दुःख भी ब्रह्म है। जब सब कुछ ब्रह्म ही है; तो, मैं किस को त्यागूँ ! किसको ग्रहण करूँ !! किसको न करूँ !!!

किसे भला समझूँ ! किसे बुरा समझूँ !! सभी तो परमानन्द ब्रह्म ही हैं।

किसको अपना समझूँ ! किसको पराया !! मैं भी ब्रह्म। यह भी ब्रह्म। वह भी ब्रह्म। सब तो एक ही हैं। सब आत्मरूप ही हैं।

ब्रह्म आनन्द रूप है। मैं, वह, वे सभी आनन्द रूप हैं। सारा विश्व आनन्द रूप है। फिर क्यों न ब्रह्मानन्द में विचरता रहूँ !"

प्रिय राम ! ऐसा बोलते-बोलते, कच ऋषि पुनः समाधि में डूब गए। मन ब्रह्म में विभोर हो गया।

प्रिय राम ! स्थिति प्रकरण की चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में उपशम-प्रकरण की वार्त्ता शुरू की जाएगी।

प्रिय मित्र ! आवें, ब्रह्म के सर्व व्यापी होने की प्रतीति, दिल में बैठा कर, अपने चित्त को निर्मल करते हुए, उनका आभास पाने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का प्रयास करें। कोरे पढ़ते-लिखते जाने से विषयों की जानकारी तो हो जाएगी, पर विशेष लाभ न होगा।

सच पूछिए, तो आत्म-शुद्धि के बिना विषयों की जानकारी होने से घमण्ड होता है। घमण्ड से पतन होता है। मलीन अन्तःकरण वाले की अर्जित विद्या दुःखदाई ही होती है।

सवाल यह नहीं है कि अमुक व्यक्ति कितने शास्त्रों का ज्ञाता है? सवाल यह है कि उसने जीवन में क्या उतारा है। सब कुछ, पढ़ लिख कर, कुछ भी आचरण में नहीं लाने वाले की अर्जित विद्या वैसे ही भार स्वरूप है—जैसे गधे पर धर्म-ग्रथों का भारी बोझ।

मित्र! जब संसार में हम लोग आए हैं—तब शरीर का व्यापार चलाना ही होगा। जब-तक आयु है—जीना ही होगा! फिर-फिर रो-रो कर जीने से क्या फायदा! क्यों न खुशी-खुशी रह हँसते-खेलते जीवन बिताया जाय!

बहुत ज्यादा भ्रमने की जरूरत नहीं है! अपने नियत कर्मों को सहर्ष करते जाँय। सब को बन्धुवत् समझ, ईर्षा-द्वेष को बहराते जाँय। स्वजनों, माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र-पुत्री मित्रादिकों में विशेष प्रेम का होना स्वाभाविक है। किन्तु विशेष आसक्ति का होना दुःखदाई है।

संसार में, सब कोई, सब कुछ, सब समय नहीं पाता। जो सहज में प्राप्त हो, उसमें ही तृप्त रहना श्रेयस्कर होगा। पाने की इच्छा बनी रहने से तो, अभाव का अभाव नहीं होगा। एक वस्तु पाने के बाद, दूसरी की चाह जागेगी। इसलिए, जीवन में संतोष का आना नितान्त आवश्यक है।

कहीं-कहीं, **मित्र**! संतोष आलस का भी कारण बन जाता है—सो-नासमझी से! आलस वश लोग गरीबी में संतोष कर लेते हैं। अपने भूखे रह जाते हैं। स्त्री-बच्चों को भखा रख देते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यही किस्मत है—इसी पर संतोष किया जाय—सोच-सोच कर रह जाते हैं।

मेरे विचार में उनकी ये विचार धाराएँ बिल्कुल भ्रमात्मक हैं। और इस प्रकार का संतोष सही संतोष नहीं है। लोगों को चाहिए, कमर कस कर, संसार-क्षेत्र में उतरना और जान की बाजी लगा कर, जीविकोपार्जन करना।

और **मित्र** ! बहुत लोग, पूजा, पाठ, पठन-पठनादि में इतना लग जाते हैं, कि अपने माँ-बाप, बीबी-बच्चों तक की सुख-सुविधा की उपेक्षा करने लगते हैं। वे नहीं समझते कि ये भी उनके पास भगवान् रूप ही हैं। उनकी पूजा पहले-बाद में और की—मित्र ! मेरी तो यही धारणा है।

दिल में बहुत सी बातें आप से कहने को हैं। सब को एक साथ कहने से तो एक पुस्तिका बन जायेगी।

एक बात कहे देता हूँ—भले-बुरे का विचार उठते रहना, यह बुरा, वह भला आदि बातों को मन में भंजाते रहना भी अत्यन्त दुःखदाई है। क्या पड़ा है—ये सब सोचने का ? वृथा मन को मलीन करने व थकाने का ? दूसरे की निंदा तो घोर पाप है ही। स्तुति भी क्या करनी ? किसी से क्या लेना-देना है। जीवन-व्यापार के संचालन में जो-जो संपर्क में आवें, उन सब से जी खोल कर, हंसते-बोलते जीवन यात्रा समाप्त करें।

आइए, ईश-वन्दना कर बिदा लें—

हे दयामय, हम सबों को शुद्धताई दीजिए।
दूर करके हर बुराई को भलाई दीजिए॥
हो उजाला सब के मन में, ज्ञान के प्रकाश से।
और अन्धेरा दूर सारा हो अविद्या नाश से॥
कीजिये हम सब का हृदय शुद्ध अपने ज्ञान से।
मान भक्तों में बढ़ाओ, अपने भक्ति दान से॥

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मात-पिता तुम मेरे, शरण गहूँ किस की।
तुम बिन और न दूजा, आस करूँ जिसकी ।।

आप सदा प्रसन्नचित्त रह सत्-मार्ग-गामी बनें—यही मेरी एक-मात्र कामना है।

पुनः प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

 Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपशम-प्रकरण

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

२४-१२-६६

सादर प्रणाम !

पिछले पत्रों में स्थिति प्रकरण की चर्चा हो चुकी है। उपशम प्रकरण की चर्चा शुरू की जाती है।

वैराग्य-प्रकरण में श्री रामचन्द्र जी ने युक्ति-युक्त वैराग्य की बातें कही—अपने प्रश्न महर्षि वशिष्ठ के सामने रखे।

मुमुक्षु प्रकरण में विश्वामित्र जी के अल्प उपदेश के बाद महर्षि वशिष्ठ जी ने राम चन्द्र जी को जम कर, उपदेश देना शुरू किया और रामचन्द्र जी की शंकाओं को दूर करने का सफल प्रयास किया। उनमें अच्छे गुणों को अपनाने व सत्य-मार्ग पर चलने आदि की चाह जगाई।

उत्पत्ति-प्रकरण में महर्षि वशिष्ठ ने जगत् की उत्पत्ति की, आध्यात्मिक व्याख्या की—उसे मन की काल्पनिक रचना बताई।

स्थिति-प्रकरण में, उत्पत्ति प्रकरण के विषयों को और विस्तार में वर्णन कर, विचारों में परिपूर्णता लाई तथा उन पर टिके रहने की दृढ भावना जगाई।

अब, उपशम-प्रकरण में पिछले विषयों को और परिष्कृत करते हुए—विषय-वासनाओं से निवृत्ति के मार्ग बतलाते हैं—यानी इनसे छुटकारा पाने की युक्ति बतलाते हैं। निम्नाङ्कित उसके मुख्य विषय हैं :—

१. केवल ब्रह्म ही सदा एक-सा रहने वाला है—एक मात्र यही सत्य है, और सब कुछ क्षण भंगुर व असत्य है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

२. आत्मा ब्रह्म का ही प्रतीक है—क्या ब्रह्म ही है।

३. हम हर जीव धारी आत्मा हैं—देह नहीं। भ्रमवश अपने को देह समझ, उसी से ममता करना भयङ्कर भूल है।

४. भोगों के भोगने से तृप्ति होने के बदले और भोग-इच्छा की ओर जागृति ही होती है—परिणाम—सदा ग्लानि और शक्ति की क्षति ही होती है।

५. वासनाओं के त्याग से ही, आनन्द-भूत्ति, ब्रह्म रूप आत्मा में नेह लगता है। वासना शून्य कर्म से ही चित्त निर्मल होता है।

६. अन्तःकरण के मैल धुल जाने पर ही, अपने-पराए, राग-द्वेषादि से नाता टूटता है। तभी एक मात्र भगवान् से नाता जुटता है।

७. जो जन्मता है—एक-न-एक दिन अवश्य मरता है। मृत्यु टाली नहीं जा सकती।

८. मृत्यु से देह का परिवर्तन होता है। जीव कभी मरता नहीं। हम लोग, पहले भी थे, अभी भी हैं, आगे भी रहेंगे।

प्रिय मित्र ! हम लोग से मेरा मतलब आत्मा से है; देह से नहीं। देह तो न मालूम कितनी बार बनी और बिगड़ी और आगे भी बनती-बिगड़ती रहेगी। मृत्यु पर शोक करना निरा मूर्खता है।

९. जीवन का उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है। जैसे पंक्षी को उड़ने के लिए दोनों पंखों की आवश्यकता है, वैसे ही मुक्ति के लिए, कर्म और ज्ञान दोनों आवश्यक हैं। निष्काम कर्म से चित्त निर्मल होता है फिर निर्मल चित्त में ही ज्ञान, उदय होता है। ज्ञानोदय के बाद ही ब्रह्म में मन रमता हैं।

१०. भक्ति भी त्यागी नहीं जा सकती ! यही कर्म और ज्ञान को सरस व फलवती बनाती है। सच पूछिए, तो दोनों को यही भक्ति ही जनती है। मातारूप पालती हैं। मुक्ति दिला कर

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

खुद विलषति है। जैसे बालक माँ के बिना टुअर, असहाय व अभागा हो जाता है, वैसे ही भक्ति के बिना जीव।

११. शरीर के बैठे रहने पर भी, मन देश-देशान्तर में भ्रमण करता रहता है। जो घटनाएँ बाहरी दुनिया में वर्षों में घटती हैं, मन उन्हें पलकों में भाँप लेता है। मन के फुरने (फड़कने) से ही संसार-प्रपञ्च उदय होता है। इसके क्षय होने से ही नाश होता है।

१२. जीते जी ब्रह्म में, चित्त का अविचल रूप से स्थिर हो जाना ही जीवन-मुक्ति है। मन को ब्रह्म में पिरोए, जीवन मुक्त प्राणी अपने सारे कर्मों को बिना किसी वासना के करता जाता है। फल में उसकी स्पृहा नहीं होती। वह अपने को कर्मों का कर्त्ता नहीं बूझता। इससे उसे कर्म-फल नहीं व्यापते। सारे सांसारिक विकारों से अछूता रह, वह अपनी जीवन-यात्रा समाप्त करता है।

१३. भगवान् में मन को पिरोने से ही, सच्चे सुख की प्राप्ति होगी। तभी, चिर शांति मिलेगी। अपने स्वजनों व प्रिय जनों की ओर खींचे-खींचे रहने से मन उनकी ओर न जा पाएगा।

१४. निरंतर भोगों के भोगने में रत रहने से काम-वासनाएँ हमें ही भोगने लगेंगी। हम उन्हें क्या भोगेंगे।

मन ही मन, विचारने, से चित्त-निरोध की भावनाएँ दृढ़ होती हैं। चित्त से पूछिए पर—"रे चित्त। तू नाहक इतना चंचल क्यों रहता है! क्यों स्थिर नहीं होता! अब तक बिना लगाम के घोड़े की नाईं स्वच्छन्द-विचरता रहा; इससे क्या तुझे कुछ लाभ हुआ भी! भोगों की कल्पना तथा उनके भोग से भी तुझे अब-तक तृप्ति न हुयी, तो, क्या सोचता है; आगे हो जाएगी! कदापि न होगी। तू अपने स्वामी जीव को अब और आगे तबाह मत कर! प्रिय दोस्त! मेरी बात मानजा! तुझे मेरी कसम!"

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

समझाते-समझाते, चित्त एक-न-एक दिन पिघल जाएगा। स्थिर हो ही जाएगा।

प्रिय मित्र ! आगे अब, महर्षि वशिष्ठ जी के मुखारबिन्द से उपशम प्रकरण के उपदेशों को दृष्टान्त सहित सुनिए। कहानियाँ अत्यन्त मनोहर हैं। बड़ा आनन्द आएगा।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! आत्म-ज्ञानी राजा जनक का जिक्र शुरु में ही आया है। जीवन-मुक्त—वे कैसे हुए !—सो, सुनो :—

जनक के जीवन मुक्त होने की कथा

जनकपुर के राजा, जनक, एक दिन, अपनी हरी-भरी सुन्दर फुलवारी में टहल रहे थे। अचानक, उन्हें कुछ सिद्धों के गाने सुनाई पड़े। इधर-उधर ताके, पर वे सिद्ध-गण नजर न आए। उनके गाने राजा जनक के लिए कड़ी चेतावनी थे। सुन कर, राजा जनक अवाक् हो गए। इन गानों का भावार्थ निम्न प्रकार का था :—

"संसार की समस्त भोग वस्तुएँ अंत में दुःखदाई हैं;— यह जानते हुए भी जो उन भोगों के पीछे ही दौड़ता है, वह मनुष्य के भेष में गदहा है।

हृदय में बसने वाले, परमात्मा को न पूज कर, बाहर के देवताओं की पूजा के फेर में पड़ने वाला महा मूर्ख है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हम लोग उस ब्रह्म की आराधना करते हैं, जो सर्व व्यापी है, जो सत्य है और आत्मा की भी आत्मा है अर्थात् सब कुछ वे ही हैं। न उनके बिना कुछ है और न उनके परे ही कुछ है।

वह ब्रह्म, सत्य और असत्य, प्रकाश व अप्रकाश, द्रष्टा (देखने वाला) और दृश्य (दीखने वाली वस्तुओं) से भी परे और उनके मध्य में है। वह शांत व आनन्दमय है। उस ब्रह्म में मन के जम जाने से वासनाएँ निर्मूल हो जाती हैं। फिर हम ऐसे ब्रह्म की आराधना क्यों न करें ?

प्रिय राम ! गीतों को सुन कर, राजा जनक को बड़ी ग्लानि हुई। सोच में, डूबे हुए, वे सीधा महल लौटे और एकान्त में बैठ कर, फिर-फिर, सोचने-विचारने लगे—

"बड़े-बड़े राजा-महाराजा काल के गाल में चले गए। कोई भी मृत्यु को नहीं टाल सका। फिर भी, मैं नहीं चेतता। भोगों के भोगने में ही रत रहा। अब-तक मृत्यु की याद तक न आई।

इच्छाएँ मेरी कभी पूरी नहीं हुईं। एक के बाद दूसरी, फिर-फिर जागती रहीं। एक भोग वस्तु की प्राप्ति के बाद दूसरी की इच्छा सदा बनी रहती है। मन गीध की तरह भोग-वस्तुओं पर, मड़राए फिरता है। किसी एक पर नहीं टिकता।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

मुझे अब होश हुआ। अब, संसार से लिपटा नहीं रहूँगा। काम वासनाओं का शिकार अब, आगे, न बनूँगा। मन को कस कर बाँध रखूँगा।"

प्रिय राम ! यों सोच-सोच कर, राजा जनक मन को धिक्कारने लगे। चित्त को संबोधन कर, मन ही मन, बोले—"रे चित्त ! तू भूल-भूलैया में क्यों पड़ा है। जिन-जिन वस्तुओं को तू अब-तक पाया; जिन-जिन भोगों को तू जी भर-भर के भोगा उनमें किसी से तेरी तृप्ति हुई क्या ! तो क्या सोचता है कि आगे हो जाएगी ! तू भली-भाँति सोच-विचार ले— भोगों के पीछे दौड़ना, तेरे हित में अच्छा नहीं है।

जरा तू यही बता कि किस भोग वस्तु में रमणीयता है ! प्रिय लगने वाली नर-नारी की देह-मल-मूत्र, हाड़-मांस रक्तादि की पिटारी है। तिस पर, उसकी मिथ्या रमणीयता भी क्षणिक ही है। तू मांस के टुकड़े पर न लुभा ! अब शांत हो जा।"

प्रिय राम ! राजा जनक के इस प्रकार से, चित्त को बार-बार समझाने से, धीरे-धीरे वह विषय-वासनाओं से अलग हो, शांत हो गया। फिर, मन ब्रह्म में रम गया। उन्हें जीवन-मुक्ति मिल गई।

अब उनकी सभी प्रकार की इच्छाएँ मर गई हैं। किसी भी वस्तु को पाने व त्यागने की चाह न रही।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अपना-पराया, अब, कोई न रहा। किसी से द्वेष ही रहा न राग ही।

अब, उनके सभी काम सहज भाव से यंत्रवत् होने लगे। कर्मों के करने में, कर्त्तापन का अहं-भाव जाता रहा। राज-काज, पूर्ववत् करते रहे, लेकिन, अब, उन्हें किसी काम के होने-न-होने से हर्ष-विषाद नहीं होता। भूत-भविष्यत् दोनों को भुला कर, वर्त्तमान के सहज प्राप्त कर्मों को करते रहे। बाहर से तो कुछ करते रहे—लेकिन भीतर से, राज-पाट, स्त्री,पुत्रादि से नाता तोड़ विलग हो रहे।

राज-काज करते हुए, राजा जनक ब्रह्म ज्ञानियों में श्रेष्ठ हो गए।

प्रिय राम ! राजा जनक की नाईं, तू भी अपने नियत कर्मों को सहज भाव से करता हुआ, आत्म-ज्ञान प्राप्त कर, जीवन-मुक्त हो जा। संसार में रह कर, जीवन के सारे व्यापारों को चलाते हुए ही, आत्म-पद की प्राप्ति हो जाएगी। संसार से भागने की आवश्यकता कतई नहीं है।

प्रिय राम ! आगे तू पुण्य और पावन नामक दो ब्राह्मण पुत्रों की ललित कथा सुन :—

पुण्य और पावन की कथा

जम्बू द्वीप के महेन्द्र पर्वत के निकट, गंगा-तट पर,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

किसी समय, एक ब्राह्मण स्त्री-पुत्र के साथ रहते थे। ब्राह्मण दम्पति-ब्रह्म-ज्ञानी थे। उनके दो पुत्र-पुण्य और पावन नाम के—थे। पुण्य बड़े और पावन छोटे थे।

दोनों भाइयों ने साथ-साथ विद्याध्ययन किया। साथ-साथ ही साधना की। पुण्य का पूर्व जन्म का संस्कार वलिष्ट था। उन्हें आत्म-ज्ञान सहज में प्राप्त हो गया। बेचारे पावन का पूर्व संस्कार कमजोर था। उनकी बुद्धि तर्क-वित्तर्क (वाद-विवाद) में उलझी, भ्रमती रह गई। उन्हें आत्मबोध हुआ नहीं।

इसी बीच उनके माँ-बाप वृद्ध हो चल बसे। पुण्य उनका दाह-संस्कार कर, खुशी-खुशी रहने लगे। माँ-बाप के मरने का शोक उन्हें जरा भी न व्यापा।

लेकिन पावन को माता-पिता का वियोग असह्य हो गया। वे फूट-फूट कर, रोने लगे।

पुण्य उन्हें समझाने लगे!

भाई पावन! जो जन्मता है वह अवश्य मरता है। मृत्यु टाली नहीं जा सकती। माँ-बाप सभी के मरते हैं। ऐसी बात नहीं है कि पहले-पहल हम लोगों के ही मरे हैं। वे दोनों तो जीवन-मुक्त थे। मर कर, विदेह-मुक्त हो व्रह्म में मिल गए। उनके लिए शोक करना वृथा है।

उनका बिछुड़न, होना ही था। उसे कोई टाल नहीं सकता। अब रोने-धोने से कुछ न बनेगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भाई पावन ! जीव तो मरता भी नहीं। वह तो पुराने वस्त्र की नाईं देह को त्यागता है। मुक्ति होने पर, व्रह्म में मिल, एक हो जाता है, अन्यथा दूसरे नूतन शरीर में प्रवेश करता है।

जब-तक, भगवत् की प्राप्ति नहीं होती, जीव के अनेक जन्म होते रहते हैं। तेरे-मेरे, कितने जन्म हो चुके हैं ! तुझे अभी-तक दिव्य-ज्ञान व दिव्य-दृष्टि की प्राप्ति न हुई है। इसीलिए, तुझे पूर्व-जन्मों की स्मृति (यादगारी) नहीं है। मैं बताता हूँ; तू सुन—

भाई पावन ! तू पहले मृग-योनि में जन्मा था। तब बहुत से हरिण-हरिणी तेरे कुटुम्ब व संगी-साथी थे। सब छूट गए। उनके लिए, अब, कहाँ शोक करते हो !

तू हंस-योनि में जन्मा था—तब बहुत से हँस-हाँसनी तेरे अपने थे। सब छूट गए। उनके लिए शोक तू क्यों नहीं करता !

तू वृक्ष-योनि में था—तब अनेक वृक्ष तेरे अपने थे। सभी बिछुड़ गए। सिंह-योनि में था, तो, सिंह-सिंहिनी तेरे अपने थे। मत्स्य (मछली) योनि में मछलियाँ तेरे अपने कुटुम्ब थीं। सभी तो बिछुड़ गए। किसी के लिए, तो अभी शोक नहीं करता।

भाई पावन ! तू दशार्णव, देश में कौवा और बानर था। तुषार देश में राजा के घर जन्म लिया। फिर,

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जंगल का कौवा हुआ। त्रिगर्त देश में गदहा हुआ। और शल्य देश में कुत्ता हुआ। तू ही साल-बन में पक्षी हुआ। इस प्रकार से तेरे अनेक जन्म भिन्न-भिन्न योनियों में हो चुके हैं। हर जन्म में, अपनी योनि के तेरे माता-पिता-बन्धु बान्धव संगी-साथी थे। सब से तो जुदा हो गया। क्या किसी के लिए, जरा भी कभी शोक करता है—तू ! फिर, सिर्फ इन्हीं के लिए क्यों दुःखी है !

भाई पावन ! मेरे भी तेरी तरह अनेक जन्म हो चुके हैं। अपनी वासना और कर्मानुसार भिन्न-भिन्न योनियों में जन्मता रहा हूँ।

अपने प्रत्येक जन्म के माता-पिता भाई-बहन, स्त्री-पुत्र आदि को खो चुका हूँ। अभी मैं तेरा बड़ा भाई बना हूँ। कितने जन्मों में तू मेरा बड़ा भाई हो चुका है।

इसलिए, भाई पावन। तू माता-पिता की मृत्यु के लिए वृथा शोक मत कर।

प्रिय राम ! पुण्य के उपदेश से पावन का मोह दूर हो गया उसे आत्मबोध हो गया। अब वह खुशी-खुशी रहने लगा।

प्रिय मित्र ! पत्र बहुत लम्बा होता जा रहा है। आप को पढ़ने में तकलीफ होगी। इस प्रकरण के अन्य बातों की चर्चा अगले पत्र में होगी।

पत्रों के पढ़ने के साथ-साथ चिन्तन मनन भी करते जाँय। इनकी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

शिक्षाओं को जीवन में उतारते जाँय। सिर्फ पढ़ते ही न जाँय। गुनते भी जाँय। तभी लाभ होगा!

और **मित्र**! हृदय में जब प्रेम उपजे, तब न पढ़ना स्वार्थ। आपने पढ़ा ही होगा—

पोथी पढ़ि-पढ़ि जग मुवा, पंडित भया न कोय।
ढाई अक्षर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।

चाहे हम लोग सारा जीवन जितनी भी पुस्तकें पढ़ते रहे—जबतक हम लोगों के हृदय से प्रेम की निर्मल धारा नहीं बह निकलेगी—पढ़ाई पूरी न होगी—फलवती न होगी। 'प्रेम' शब्द सिर्फ अढ़ाई अक्षरों से बना है। इस अढ़ाई अक्षर वाले प्रेम को जिसने पढ़ लिया—यानी जीवन में उतार लिया—उसकी पढ़ाई पूरी समझिए। वह पंडित हो गया।

ऐसे तो आप स्वयम् मित्र! प्रेम की साक्षात् मूर्ति हैं। आप का दिल प्रेम से लबालब भरा है—क्या एक बड़ी दरिया ही बह निकली है। मेरे जैसे किस्मत वाले गोते लगाते हैं, अभागे कुढ़ते हैं।

अब विदा लेता हूँ। अगले पत्र की प्रतीक्षा करें। अनंत शुभ कामनाओं के साथ।

सप्रेम प्रणाम!

आपका आत्म स्वरूप
गणेश

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपशम-प्रकरण

प्रिय मित्र !

जमशेदपुर
२५-१२-६६

सादर प्रणाम !

आज दिसम्बर २५ ईसा-मसीह का जन्म-दिन है। आप ईसाइयों—का सबसे बड़ा त्योहार है। आज के ही दिन—तारीख २५-अधूरे महीने व साल को—प्रेम और शांति के उपदेश देने पैगम्बर ईसा-मसीह जन्मे थे।

उन्होंने पीड़ित लोगों के बीच प्रेम व शांति का अनमोल उपदेश दिया। फिर, भी, नासमझी से लोगों ने उन्हें शूली पर चढ़ा कर, उनकी जान ले ली।

जो उन्हें शूली पर चढ़ा कर निर्दयता से मार रहे थे, उनके लिए वे भगवान् से दुआ मना रहे थे। मरते दम तक लोगों ने उनके मुख से यहीं निकलते सुना—

भगवन् ये नहीं समझते कि ये क्या कर रहे हैं !
इन्हें तू माफ कर देना !!

मेरे प्यारे मित्र ! बुराई करने वालों की भी भलाई करना—दुनिया में पहला मिसाल था !

इसको जीवन में उतारने से, अन्य सभी अच्छे गुण आप से आप आ जाएँगे। लेकिन आचरण में न लाने से, बाइबिल के पुराने नये टेस्टामेन्ट, उन पर निकली अनेक पुस्तकों, तथा विश्व के अन्य धर्म शास्त्रों के पूरी गाड़ी भर उपदेशों से भी कुछ हासिल न होगा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अतएव, ईसा-मसीह के उपर्युक्त उपदेश को आचरण में लाने के लिए, दृढ़ संकल्प हों !

बड़े दिन के शुभावसर पर मैं, सब से कीमती अपना असीम पवित्र प्रेम शुभ कामनाओं के साथ, आप को भेंट करता हूँ। अपना यह सूक्ष्म उपहार इतना ज्यादा भेजता हूँ कि आप का दिल लबालब भर जाएगा; जरा भी खाली न रह जाएगा ! फिर औरों का उपहार कहाँ रखिएगा !

मित्र ! लिखते-लिखते अपनी भूल सूझी। अपना प्रेम तो आप को कब ही भेंट कर चुका हूँ। दिए को दुबारा क्या देना !

अब विषय-प्रसंग पर आवें !

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! संसार में रह कर, जीवन के समस्त व्यापारों को चलाते हुए भी प्राणी, ब्रह्म ज्ञानी हो सकता है—इसका दूसरा दृष्टान्त, राजा बली का सुन—

राजा बली की कथा

किसी समय, पाताल लोक में बली नामक एक प्रतापी राजा राज्य करते थे। बहुत से देशों को जीत कर, उनने अपने राज्य का विस्तार कर लिया था। देव-दानव दोनों उनसे पराजित हुए थे।

बहुत काल तक, जी भर भोगों को भोगते रहे; पर तृप्ति न हुयी। शुरू में क्षणिक प्रिय भासने वाले भोग अंत में नीरस व दुःखदाई ही प्रतीत हुए।

एक दिन राजा बली के मन में सद्विचार की

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भावनाएँ जागीं। वे मन ही मन सोचने विचारने लगे—"एक जमाने से मैं इतने बड़े राज्य पर, शासन करता आ रहा हूँ। चुन-चुन कर, समस्त मन-चाहे भोगों को भोगता आ रहा हूँ। लेकिन अब-तक शांति नहीं मिली। राज-पाट-सब कुछ रहते हुए भी चित्त अशांत ही रहता है। सच्चा सुख नसीब नहीं होता है।"

यों सोचते-सोचते, उन्हें अपने पिता विरोचन की बात याद आई। ये कहा करते थे—जो सुख ब्रह्म में लीन होने में है, वह भोगों में कतई नहीं है। इससे मन को ब्रह्म में स्थिर करना चाहिए।

उस समय बली को अपने पिता की बात समझ में न आई। लेकिन अभी सही प्रतीत होने लगी। वे तुरंत अपने गुरु शुक्राचार्य के पास गए और उन्हें प्रणाम कर, विनम्र भाव से बोले—

"**महाराज** ! मुझे मुक्ति पाने की युक्ति बताइए।"

शुक्राचार्य बोले—

राजन् ! मुझे एक जरूरी काम से तुरंत बाहर जाना है। ज्यादा कहने का समय नहीं है। एक ही बात बताए देता हूँ। उसी को अमल में लाने से तेरी मुक्ति हो जाएगी।

वह, एक बात यह है—जो कुछ भी संसार में है—वह ब्रह्म का ही विस्तार है। उससे भिन्न कोई भी वस्तु नहीं

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

है। उससे परे कोई अलग सत्ता नहीं है। इस एक के जी में बैंठ जाने से, तू अपने आप को ब्रह्म ही पावोगे। वस। वत्स! इतने मात्र से तू परम पद को प्राप्त कर लोगे।"

इतना कह कर, शुक्राचार्य चल दिए। राजा बली इसी एक बात को मन में गुनते-गुनते अपने राज-महल लौटे। चिन्तन करते-करते उनकी निर्विकल्प समाधि लग गई। उनका मन व्रह्म में विभोर हो गया।

प्रिय राम! राजा बली के बहुत दिनों तक समाधि में डूबे रहने से, राज्य के कामों में गड़बड़ी होने लगी। तब शुक्राचार्य ने आकर जगाया और बोले—

वत्स! तू जीवन मुक्त हो चुका है। जो सुख समाधि में पाता है, वही तू राज-काज करते हुए भी पावोगे।"

फिर, राजा बली व्रह्म में चित्त स्थिर रखते हुए, राज्य करते रहे। समय आने पर, वे मर कर विदेह मुक्त हो गये।

प्रिय राम! तू भी राजा बली की तरह जीवन-मुक्त हो, अपने समस्त कर्मों को निष्काम भाव से करता जा। आहार-विहार, आमोद-प्रमोद, को कतई त्यागने की आवश्यकता नहीं है। मनुष्योचित सभी कर्मों को करते हुए प्रसन्नचित्त रह।

प्रिय मित्र! आप भी वैसा ही करें और मैं भी। विरक्ति

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भीतर से हो; बाहर से नहीं। लोगों की नजरों में कुछ त्यागने की जरूरत नहीं। वैराग्य प्रदर्शन (दिखाने) की चीज नहीं है--अमल लाने की है।

त्यागी जीव के लिए प्राप्ति-अप्राप्ति, हानि-लाभ सब बराबर है। भोगों के भोगने से क्या! और न भोगने से क्या!! उसे कुछ फरक नहीं पड़ता।

उसकी दृष्टि में कोई सुन्दर या कुरूप नहीं दीखता। उसे तो सब में ब्रह्म की झांकी मिलती है।

बस ! विदा दीजिए। फिर मिलेंगे—अगले पत्र में।

सप्रेम प्रणाम !

आप का आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपशम-प्रकरण

जमशेदपुर

प्रिय मित्र, २६-१२-६६

सादर प्रणाम !

उपशम-प्रकरण की चर्चा होती आ रही है। आगे आप महर्षि वशिष्ठ जी के मुख से माया के बारे में सुनिए।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! भगवान् की माया अपरम्पार है। इसका वारापार नहीं है। इससे पार पाना अत्यन्त कठिन है। बिना मन को वश में किए, यह जीता नहीं जा सकता। इसके बारे में एक पुरानी कहानी है, मैं तुझे सुनाता हूँ।

गाधी ब्राह्मण की कथा

कोशल देश में, किसी समय, गाधी नामक ब्राह्मण रहते थे। वे वेद को जानने वाले, ज्ञानी, गुणी व सदाचारी थे। उन्हें भगवान् की माया को जानने की इच्छा हुई। वे इसके लिए भगवान् की आराधना करने लगे।

भगवान् प्रसन्न हो, प्रगट होकर बोले—ब्राह्मण देवता जो चाहें; मागें !

गाधी प्रणाम कर, कर जोड़ बोले—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"भगवन् ! आप सर्व शक्तिमान, सब कुछ जानने वाले परम दयालु हैं। कुतूहलवश, मेरी इच्छा आप की माया के रूप को देखने की हुई है। अपना विचित्र माया-रूप मुझे दिखलाइए।"

"कभी देख लेंगे"—कहते हुए, भगवान् अन्तर्ध्यान हो गए।

कुछ दिनों के बाद, गाधी गंगा-स्नान को गए। अपने कपड़े घाट पर, उतार कर नहाने लगे। गोता लगाते ही उन्हें निम्न प्रकार का विचित्र अनुभव हुआ :—

उन्हें मालूम हुआ कि अपने घर पर सख्त बीमार हैं। बीमारी बढ़ रही है, अब वे मर रहे हैं। होते-होते, मर जाने का अनुभव हुआ। उनके अपने लोग रूदन करते नजर आए। उनकी लाश जला दी जाती है। उन्होंने अपने को दूसरे-दूसरे लोकों में पाया; जहाँ वे अपने अच्छे-बुरे कर्मों के फल भोगे।

फिर वे एक चाण्डालिन के गर्भ में प्रवेश करते हैं। चाण्डाल बच्चा होकर जन्मते हैं। कटज्जू चाण्डाल नाम पड़ता है। बड़े होने पर, उनकी शादी एक कुरूप चाण्डाल-कन्या से होती है। उससे पुत्र-पुत्रियाँ होती हैं। मिहनत-मजदूरी कर वे अपनी-घर-गृहस्थी चलाते हैं। लड़के-बच्चे सयाने हो जाते हैं। अब वे खुद बूढ़ा हो जाते हैं।

उसी बीच उनके देश में भीषण अकाल पड़ता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

लोग दाने-दाने को मुहताज हो जाते हैं। अन्न के बिना उनके बीबी-बच्चे भूख से तड़प-तड़प कर मर जाते हैं। वे उनकी मृत्यु से बहुत दुःखी होते हैं और फूट-फूट कर रोने लगते हैं।

इतने में एक हाथी आता है और उन्हें अपने सूँढ़ से उठाकर, पीठ पर बिठा लेता है।

प्रिय राम ! संयोग की बात थी। वह हाथी एक राज्य से छोड़ा गया था। उस देश का राजा बिना किसी संतान के मर गए थे। उनका अत्तराधिकारी चुनने के लिए हाथी छोड़ा गया था। प्रथानुसार, जिसे हाथी, अपने मन से, अपनी पीठ पर बिठा लेता वही राजा बनता।

हाथी आगे-आगे जाता था; मंत्री तथा अन्य कर्मचारी उसके पीछे पीछे।

हाथी के पीठ पर बैठाते ही, मंत्री तथा अन्य राज कर्मचारी पास आकर, उन्हें (कटज्जू चाण्डाल को) प्रणाम करते हैं और हाथी की पीठ पर से उतार कर राजधानी में लाते हैं और राज-तिलक दे, राजा बना देते हैं।

अब, वे कटज्जू चाण्डाल से राजा बन, राज-सुख भोगने लगते हैं। एक से एक सुन्दर नवयुवतियाँ उनके अन्तःपुर में बास करती हैं। वे उन रमणियों के साथ छूट कर रमण करते हैं। सभी प्रकार के राज-भोग जी-भर भोगते हैं। देखते-देखते आठ वर्ष गुजर जाते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एक दिन, राजमहल से उनकी शाही सवारी निकली है। उनके पुराने चाण्डाल साथी, जो दुर्भिक्ष के कारण, अपना देश छोड़, जीवकोपार्जन ले लिए, आए हुए हैं— उन्हें देख लेते हैं। देखते ही अपने पुराने साथी कटज्जू चाण्डाल को पहचान लेते हैं; गले मिलने के लिए दौड़ पड़ते हैं। सिपाहियों के रोकने का परवाह नहीं करते हैं। क्यों करने जाँय, जब उनके साथी कटज्जू चाण्डाल ही राजा हैं, तब बेचारे सिपाहियों की क्या विसात !

बात फूट जाती है। राजा चाण्डाल है—की खबर घर-घर हो जाती है। लोग बहुत दुःखी होते हैं। चाण्डाल राजा की प्रजा होने के घोर पाप की प्रायश्चित में, सारी प्रजा अग्नि-कुण्ड में जल मरती है।

इतनी बड़ी हत्या से राजा—कटज्जू चाण्डाल का दिल दहल उठता है। वे भी अग्नि में जल मरने को कूद पड़ते हैं।

जलने से अचेत हो जाते हैं। जब होश आता है तो अपने को जल में गोता लगा कर, जल से ऊपर सिर उठाते पाते हैं। घाट पर कपड़े ज्यों के त्यों पड़े हैं। वही बेला है। वे ही लोग अगल-बगल नहा रहे हैं, जो गोता लगाते समय थे।

गोता लगाने में जो एकाध क्षण लगे थे, उसी में इतनी लम्बी-लम्बी कई घटनाएँ घट चुकी थीं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गंगा स्नान कर ब्राह्मण देवता गाधी अपने घर लौटे।

कुछ दिनों के बाद उनके घर एक अतिथि आए। उनका सत्कार कर बातें करने लगे।

अतिथि बोले—

कुछ रोज पहले, मैं घूमता-फिरता एक बहुत दुःखी देश में पहुँचा। वहाँ मैंने हृदय-विदारक दृश्य देखा। वहाँ की प्रजा ने अनजान में एक चाण्डाल को अपना राजा बना लिया था। आठ वर्ष के बाद जब भेद खुला तब, चाण्डाल राजा की प्रजा होने के पाप के प्रायश्चित में सारी प्रजा अग्नि-कुण्ड में जल मरी। ग्लानिवश राजा भी उसी कुण्ड में जल मरे।

तमाम हाहाकार मचा देख, मैं दुःख से व्याकुल हो गया। वहाँ से सीधा प्रयाग गया। त्रिवेणी में स्नान कर लौट रहा हूँ।

गाधी को बहुत आश्चर्य हुआ। वे अतिथि के साथ उस देश को चले गए। जो कुछ उन्हें, गंगा में गोता लगाते-लगाते अनुभव हुआ था—सो-सब कुछ वहाँ प्रत्यक्ष देखा। तब वे वहाँ से किरात देश गए। अपने चाण्डाल जीवन की समस्त घटनाएँ सही पाया। कटज्जू चाण्डाल की झोपड़ी अभी भी सूनी पड़ी थी। उनके चाण्डाल पड़ोसी वहीं रह रहे थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! सारी घटनाओं पर, विचार करने पर, गाधी को मालूम हो गया कि यही माया का रूप है ।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! किरातों के राजा, सुरघु भी राजा जनक की नाईं आत्म-ज्ञानी हो चुके हैं । आगे तू उनका वृतान्त सुन—

राजा सुरघु की कथा

कैलाश पर्वत की तराई में, एक सुन्दर देश है । वहाँ पहाड़ी जाति के लोग बसते जो किरात कहलाते हैं । किसी समय सुरघु किरातों के राजा थे । वे बड़े दयालु थे । दोषियों को भी दंड देने में उन्हें दुःख होता था । दंड दिए बिना भी काम नहीं चल सकता था इससे वे उदास रहा करते थे ।

इसी बीच, एक रोज, माण्डव्य मुनि उनके यहाँ पधारे । उनका सत्कार कर, राजा सुरघु ने अपने मानसिक दुःख को दूर करने की युक्ति पूछी । वे बोले—"मुने ! ऐसा कोई उपाय बताइए, जिसमें मेरे मन की व्यथा दूर हो ।"

माण्डव्य मुनि बोले—

राजन् ! बिना आत्म-ज्ञान के आधि (मानसिक कष्ट) और व्याधि (शारीरिक कष्ट) दूर नहीं होती । आत्म-बोध

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

होने पर, तू अपने समस्त नियत कर्मों को निष्काम भाव से स्वतः करने लगेगा। फिर, तुझे कर्म-फल नहीं व्यापेंगे। तेरा चित्त, ब्रह्म में स्थिर हो जाएगा। फिर तू जीवन मुक्त हो निमग्न विचरेगा।

इतना कह माण्डव्य मुनि चलते बने।

राजा सुरघु के दिल में माण्डव्य मुनि की बात बैठ गई। वे मन ही मन, आत्मादि के बारे में सोचने विचारने लगे— "वास्तव में आत्मा क्या है? मैं क्या? यह संसार क्या!

आत्मा न शरीर है, न इन्द्रिय न मनादि ही। आत्मा तो इनसे परे है? इनमें अपनी सत्ता नहीं है। इनमें आत्मा से ही शक्ति प्रवाहित होती है। आत्मा के बिना तो ये शून्य-वत हैं। ये विकारी हैं; आत्मा अविकारी है।"

सोचते-सोचते उन्हें भास हुआ कि वे क्षणभंगुर शरीर नहीं हैं; बल्कि अमर आत्मा हैं। यह जगत मिथ्या है और उससे उनका कोई प्रयोजन नहीं है।

वे, मन-ही-मन, कहने लगे—न मैं किरातों का राजा हूँ और न ये किरात मेरी प्रजा हैं। न मेरा यह देश है न मैं इसका स्वामी हूँ। राज-पाट, धन-दौलत, स्त्री-पुत्रादि न मेरे हैं न मैं इनका हूँ। हाड़-मांस रक्तादि से बना यह शरीर, न मेरा है न मैं इसका हूँ। इससे ममता करना बेकार है। मैं तो इन सब से परे, सदा एक रूप रहने वाली आनन्द रूप आत्मा हूँ।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

यह जगत निरा काल्पनिक है। मन की रचना मात्र है। वास्तव में ब्रह्म ही सत्य है। सब कुछ उसी का विस्तार है।

प्रिय राम ! इस प्रकार से विचारते-विचारते राजा सुरघु को आत्म-बोध हो गया। वे जीवन मुक्त हो, अपने नियत कर्मों को सहज भाव से करते हुए सुख-शांति से रहने लगे।

प्रिय राम ! एक बार सुरघु राजा के यहाँ उनका मित्र पात्सी राजा—परिथ पधारे। वे भी आत्म-ज्ञानी थे। फिर क्या था ! दोनों में आत्म-चर्चा छिड़ गई।

राजा परिथ ने पूछा—मित्र ! क्या तेरी समाधि कभी लगी ?

राजा सुरघु बोले—

दोस्त ! सच पूछो; तो मैं सदा समाधि में ही रहता हूँ। मैं अपने समस्त कर्मों को करता हुआ भी अपने को निरंतर समाधि में ही पाता हूँ। मेरा तो मन सदा पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर में ही लीन रहता है। मुझे तो सब कुछ ब्रह्म-रूप ही दीखता है। सब कुछ ब्रह्म का ही विस्तार भासता है।

संसार की विकट से विकट घटना भी मेरे चित्त को उत्तेजित नहीं कर पाती।

निष्काम भाव से कर्मों के करने, शोक-मोह से मुक्त

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहने और संसार की समस्त वस्तुओं को एक रूप-ब्रह्मवत्-देखने का नाम ही तो समाधि है। आत्म-ज्ञानी तो बराबर समाधि में ही स्थित रहता है।

प्रिय राम ! तू भी, राजा सुरघु की नाईं आत्म-ज्ञानी बन सुखपूर्वक संसार में विचर।

रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! आप के उपदेशों से मेरे मोह-भ्रम दूर हुए। मुझे रोशनी मिली। लेकिन आप के वचनामृत से जी अघाता नहीं। जी चाहता है—सुनता ही रहूँ।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! मनुष्य-जीवन का मुख्य उद्देश्य मोक्ष पाना है। मुक्ति बिना चिर शांति नहीं मिलती। जीव जन्म-मरण के चक्र में ही पड़ा रहता है। अपनी नासमझी से जहाँ सुख की आशा नहीं वहाँ वह पाने की इच्छा करता है। जिस वस्तु को पाने की वासना जागती है, उसे हर हालत से हासिल करने का प्रयास करता है। किंतु पाकर, उससे संतुष्ट नहीं होता। उससे उसका मन ऊबता है और अप्राप्त वस्तु को पाने की कामना होती है। सारी शक्ति लगा कर, जब उसे पा लेता है, तब उससे भी संतोष नहीं होता। तुरंत तीसरी अप्राप्त वस्तु पाने की चाह बलवती होती है। तीसरी के बाद चौथी-चौथी के बाद पाँचवीं प्राप्त करने व त्यागने का यह क्रम सारा जीवन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

चलता ही रहता है। जीव वासनाओं का गुलाम बन, बराबर बेचैन ही रहता है।

ब्रह्म में, मन को विलीन करने से ही चिर सुख मिलता—सो-मैं तुझे भास-विलास के संवाद से, साफ-साफ बतलाता हूँ। तू सुन।

भास-विलास-संवाद्

किसी समय, सह्याचल पर्वत पर, अत्रि मुनि रहते थे। उनकी कुटिया के पास ही दो और तपस्वी पर्णकुटी बना सपरिवार रहने लगे। कुछ दिनों के बाद दोनों को एक-एक सुन्दर पुत्र हुए। उनका नाम भास और विलास पड़ा।

भास-विलास में बचपन से ही गाढ़ी प्रीति हो गयी। दोनों ऐसे रहते-जैसे एक जीव दो शरीर। साथ-साथ रहते, साथ खाते-पीते, साथ-साथ ही, पढ़ते-लिखते !

समय आने पर, दोनों के माँ-बाप चल बसे। उनका दाह-संस्कार कर, भास-विलास दो दिशाओं में देशाटन को निकल पड़े। देश-विदेश में भ्रमण करते हुए—संयोगवश दोनों एक ही स्थान पर एक रोज पहुँच गये। मिल कर बहुत खुश हुए। बिछुड़ने के बाद, मिलने से खास खुशी होती ही है। दोनों गले मिले, बातें करने लगे—

विलास ने भास से पूछा—"भाई भास ! इतने दिनों

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तक, जुदा रह, अकेले भ्रमण करता रहा ! कह, कुशल से तो रहा ।''

भास बोले—''भाई विलास ! क्या कुशल पूछता है ! क्या बताऊँ तुझे ! दुनिया में कहाँ, कोई कुशल से है ! सब को एक-न-एक दुःख लगा ही रहता है । आनन्दमय ब्रह्म की प्राप्ति के बिना, कोई कुशल से कैसे रह सकता है ! इन्द्रिय भोगों में ही रत रहने से, निरंतर उनके पीछे ही दौड़ने से, भला, कोई कुशल से कैसे रहेगा ! जब-तक मन संसार में ही चिपका रहेगा, तब-तक कुशल कहाँ ।

जब-तक जीव अपने कर्मों को निष्काम भाव से नहीं करता; तब-तक कुशल कहाँ ? जब-तक अहं-भाव दूर नहीं होता, तब-तक कुशल कहाँ ! कैसा कुशल ! जब-तक राग-द्वेष है—तब-तक कुशल कहाँ !

कुशल तो आत्म-चिन्तन में है, प्राप्ति में है—जीवन-मुक्त होने में है ।

प्रिय राम ! भास को विलास की बातें गड़ गईं । दोनों आत्म-चिन्तन में लग गए । कालान्तर में दोनों जीवन-मुक्त हो सुख से विचरने लगे ।

प्रिय मित्र ! जिस भोग को भोगने के लिए हम लोग अधीर हो जाते हैं, उससे ही भोगने के तुरंत बाद ऊब जाते हैं । जिसे पाने के लिए तरसते हैं, उसे पाकर त्यागने के लिए भी तड़पते हैं ।

थोड़ी भी गहराई से सोचने पर, साफ मालूम हो जाएगा कि

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कोई भोग-वस्तु सरस नहीं है। कोई भी सुखद नहीं है। उनमें सुख पाने की आशा करना भारी भूल है।

तब आप-हम कहेंगे—दिल नहीं मानता; क्या करें!—सो सही है—जी भोगों से लुभाता है। उसे समझावें। न माने तो धिक्कारें। यत्न करते-करते दिल मान जाएगा। एक-न-एक दिन अवश्य मानेगा। उसे मना, विषय-वासनाओं से विमुख कर आत्म चिन्तन में लगावें। प्रयास करें जी-तोड़ न बैठे।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम! जीवन-मुक्ति के लिए, चित्त शांति नितान्त जरूरी है। खुद विचार करने से, चित्त किस प्रकार शांत हो जाता है?—सो-तू बीतहव्य के वृतान्त से—सुन :—

बीतहव्य की कथा

किसी समय, विन्ध्याचल की गुफा में बीतहव्य नामक तपस्वी रहते थे। उन्हें भोगों को भोगने की बड़ी लालसा थी। सकाम कर्म करते हुए, वे अनेक भोग भोगे। पर किसी से भी तृप्ति न हुई। किसी न किसी भोग की वासना बराबर बनी रहती थी। इससे वे हमेशा बेचैन रहते थे।

उनको अपनी दशा पर, बड़ी ग्लानि हुई। अंत में, उनके दिल में, यह बात बैठ गई कि भोगों के भोगने में सुख-शांति नहीं है। आत्म-ज्ञान से ही चिरसुख मिल सकता है। अतएव, आत्म-ज्ञान प्राप्त करने को ठानी।

उनने जंगल-बीच एक पर्णकुटी बनाई और उसी में आसन मार, आत्म-चिन्तन करने लगे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

वे, मन ही मन, सोचने-विचारने लगे—मैं भोगों को भोगने की कामना, इसीलिए न, करता हूँ कि उनके भोगने से सुख मिलेगा ! जिस भोग के लिए, मैं ललचता हूँ, जिसके लिए अधीर हो जाता हूँ, तड़पता हूँ—उसे जब सारी शक्ति लगा, प्राप्त कर, भोग लेता हूँ, तो वह भोग-वस्तु नीरस प्रतीत होने लगती है; उससे जी ऊब जाता है। किसी-किसी से तो घृणा तक कुछ समय के लिए होने लगती है। उसे नजदीक में रखते नहीं बनता। दूर किए वगैर चैन नहीं मिलता। अगर उस भोग-वस्तु में सच्चा आनन्द रहता, तो हमेशा ही वह प्रिय लगती। फिर उसे पाकर, त्यागने की इच्छा न होती।

जो भोग वस्तुएँ अपने पास रहती हैं—वे फीकी लगने लगती हैं, औरों के पास वाली बहुत मधुर, बहुत प्रिय। तमाम कोशिशों के बाद, उसे भी प्राप्त कर, भोग लेने के बाद, उससे भी जी ऊब जाता है।

इस प्रकार, प्राणी का मन किसी भी वस्तु पर नहीं टिकता। किसी से भी तृप्त नहीं होता। किसी-न-किसी, भोग वस्तु की कमी उसे बराबर खटकती रहती है। तृष्णाग्नि जलाती रहती है।

इससे साफ, जाहिर, होता है कि किसी भी भोग वस्तु में सुख की कल्पना निरा भ्रान्ति है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! उपर्युक्त प्रकार से विचारते-विचारते, बीतहव्य को विषयों से विरक्ति हो गयी।

फिर वे, इन्द्रियों के बारे में विचारने लगे—"इन्द्रियाँ जीव और मन के संयोग से ही क्रियाशील होती हैं; अन्यथा वे जड़ हैं।

प्राण से ही इन्द्रियों को काम करने की शक्ति मिलती है। प्राण के निकलते ही ये निष्क्रिय हो जाती हैं। और मन से ही इन्हें चेतना व कार्य करने की प्रेरणा मिलती हैं। अर्थात् मन का मेल होने से ही इन्द्रियाँ विषयों को जान पाती हैं और तभी उनमें भोग की कामना जागती है।

अतएव, इन्द्रियाँ कदापि आत्मा नहीं हैं। फिर मैं, इन्द्रिय नहीं हूँ। इनकी जरूरतें मेरी अपनी नहीं हैं। उनको पूरा करने के लिए, मैं बाध्य नहीं हूँ। मैं तो आत्मा हूँ।

प्रिय राम ! इस प्रकार से विचारते-विचारते, बीतहव्य को इन्द्रियों और उनके विषयों से भी मुक्ति मिली। अब, वे उनके वश में रहे। फिर वे निम्न प्रकार से विचारने लगे—

चंचल मन और जड़ प्राण भी आत्मा नहीं हैं। ये तो आत्मा के ज्ञान के विषय हैं। आत्मा को उनकी जानकारी रहती है। यदि ये आत्मा होते तो, आत्मा को इनकी जानकारी नहीं होती।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्राण तो जड़ है और मन विकारी है। और आत्मा चेतन व अधिकारी है। यह स्वयम् प्रकाशवान है।

आत्मा बुद्धि आदि भी नहीं है—क्योंकि ये भी विकारी हैं। निद्रावस्था में मन-बुद्धि, दोनों शांत निष्क्रिय हो जाते हैं; लेकिन आत्मा बराबर जागरूक रहती है। उसे निद्रा का भी पता रहता है। अतएव केवल आत्मा ही, चेतन व अविकारी है, निरंतर एक-सा, शांत व स्थिर रहने वाली है। यही सुख की राशि है। एक इसी में चित्त को स्थिर करने से सच्चे चिरसुख की प्राप्ति हो सकती है।"

प्रिय राम ! यों विचारते-विचारते, बीतहव्य का चित्त ब्रह्म में स्थिर हो गया। उनकी निर्विकल्प समाधि लग गई। बहुत समय तक वे समाहित हो बैठे रहे। समाधि खुलने पर भी, उनका मन ब्रह्म में ही लीन रहा। अब वे जीवन-मुक्त हो, सदा शांत व प्रसन्न चित्त रहने लगे।

अब न उनका कोई प्रिय रहा न अप्रिय ही। न कुछ ग्रहण करने की इच्छा रही, न त्यागने की। वे इन्द्रियों, मन और शरीर के समस्त व्यापारों को सहज-भाव से चलाते रहे। अब चित्त कभी विचलित नहीं होता। ग्लानि छू नहीं पाती। समय आने पर, मृत्यु को प्राप्त कर, वे खुशी-खुशी विदेह-मुक्त हो गए।

प्रिय राम ! तू भी बीतहव्य की तरह अपने विचार द्वारा, आत्म-ज्ञान कर और संसार में सुख-शांति से रह।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! उपशम-प्रकरण की चर्चा समाप्त हुई। अगले पत्र में निर्वाण-प्रकरण की वार्त्ता शुरू की जाएगी। तब-तक, विश्राम ले, चिन्तन-मनन करें। अब-तक के प्राप्त उपदेशों को जीवन में उतारने का प्रयास करें।

चित्त को प्रबोधें। उसे विषयों से विमुख कर, ब्रह्म में निरोधें। आत्म-विश्वास कर साधना में लग जाँय। सतत् प्रयास से आप की साधना अवश्य फलवती होगी।

बुरे वासनात्मक विचार मन में उठने न दें। उठते-उठते ही दबा दें। विषय-भोगों के बारे में सोचने से, उनमें आसक्ति होती है। फिर, पाने की इच्छा बलवती होती है। प्राप्ति में विलम्ब होने अथवा रुकावट आने से क्रोध होता है। क्रोध से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है। उचित-अनुचित, पाप-पुण्यादि का ज्ञान जाता रहता है। प्राणी पथ-भ्रष्ट हो, नष्ट हो जाता है।

भोगों के भोगने से, भोग-तृष्णा उत्तरोत्तर, बढ़ती ही जाती है। उनसे छुटकारा पाने का एक मात्र रास्ता उनका त्याग है। मित्र ! न सोचें, भोगों के बारे में, न भोगें भोगों को।

प्रिय मित्र ! भोग-वस्तुओं को पास फटकने न दें। इनको पास भी रखें, इनसे लुफ्त लें और इनसे अछूता भी रहें– यह एक अनहोनी बात है।

जीवन-मुक्ति के बाद चाहे जैसे भी रहिएगा, कुछ फरक नहीं पड़ेगा। लेकिन उसके पहले तो पूरी सावधानी बरतिए। फँक-फूँक कर पैर रखिए।

प्रिय मित्र ! मेरी बात छोड़िए। मेरा तो कब से अपना बस नहीं चलता। मुझे तो सिर्फ आशा उस जगन्नियन्ता की है। उसकी मरजी पर चलता हूँ। दिल की सब बात पत्र में क्या कहूँ ! कैसे कहूँ ! रहने दीजिए दिल में ही। चलने दीजिए, मुझे अपनी राह पर ही !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् आप को चिर सुख व चिर शांति दें। आप का पथ प्रशस्त हो। हर खुशियाँ आप को नसीब हों। आप सदा फूलते-फलते रहें...............!

अगले पत्र में पुनः मिलेंगे। तब-तक के लिए विदा दीजिए !

अनंत शुभकामनाओं के साथ सप्रेम प्रणाम !

आप का आत्मरूप

'गणेश'

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्वाण-प्रकरण-पूर्वार्ध

प्रिय मित्र, जमशेदपुर
२९-१२-६६

सादर प्रणाम !

पिछले पत्र में, उपशम प्रकरण की चर्चा समाप्त हो चुकी है। निर्वाण-प्रकरण-पूर्वार्ध की शुरू की जाती है।

निर्वाण का माने होता है—मुक्ति पाना, आवागमन से रहित होना, ब्रह्म में मिलकर एकसात् हो जाना। निर्वाण-प्रकरण, मुक्ति कराने वाला है।

जिस प्रकार जीवन की आखिरी मंजिल निर्वाण पाना है, उसी-प्रकार योगवाशिष्ठ का भी अंतिम प्रकरण-निर्वाण-प्रकरण ही है !

प्रिय मित्र ! चर्चा की एक छोर से दूसरी छोर पर पहुँच रहे हैं निर्वाण-प्रकरण को एक प्रकार से परिशिष्ट रूप ही समझिए। जिन-जिन विचारों की चर्चा होती आई है, उन सब की परिपूर्त्ति हो जाती है।

अब-तक के पठन-पाठन, मननादि से लाभ क्या हुआ ?—सो, हम लोग खुद विचार कर देखें। अध्यात्म क्षेत्र में कितनी कमाई की ?—खुद, आँके।

प्रिय मित्र ! राजा दशरथ के राज-दरबार में पुनः पूर्ववत् सत्संग मंडली बैठती है। राजकुमार रामचन्द्र जी भाइयों के साथ आते हैं। ऋषिगण तथा अन्य श्रोताओं से दरबार भर जाता है। राजा दशरथ खुद मंडली में शामिल होते हैं। महर्षि वशिष्ठ पधारते हैं और व्यासगद्दी पर आसीन हो—सत्संग शुरू करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! आगे आप ध्यान से पढ़िए। विषय मधुर तो हैं, पर जटिल भी हैं। मैं जानता हूँ––उपशम-प्रकरण के आखिरी पत्र के अंतिम भाग को भी समझने में आप को कठिनाई हुई होगी। लेकिन क्या करता ! विषय ही कुछ ऐसे हैं। अध्यात्म-वाद के उच्चतम सिद्धान्तों में हैं। सच पूछिए तो विषय है बार बार मनन करने और जीवन में उतारने का !

अब विषय, प्रसंग पर आवें !

महर्षि वशिष्ठ बोले—

वत्स राम ! ज्ञान की, अब-तक, मैंने तुझे अनेक बातें बताई। निर्वाण के लिए, उतने काफी हैं। तो भी, तेरे हित, और भी ज्ञान-भरी बातें बताता हूँ। तू ध्यान से सुन।

अज्ञान वश, प्राणी अपने आप को देह समझ उसी से ममता करता है। फलतः वह इन्द्रियों का गुलाम बना रहता है। वासनात्मक इन्द्रियाँ उसे बन्दर की नाईं नचाती हैं।

अज्ञान के दूर होते ही, वह अपने आप को आत्मा समझने लगता है। फिर, शरीर से अकारण ममता हट जाती है। उसकी इन्द्रियाँ उसके वश में हो जाती हैं। वह एक मात्र आत्मा से प्रीति करने लग जाता है। फलतः मोक्ष का भागी बनता है। जीवन-मुक्त हो सुख से विचरता है।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरुदेव ! जीवन-मुक्त होने की युक्ति मुझे और विस्तार में बतलाइए।

तब महर्षि वशिष्ठ जी बोले—

प्रिय राम ! जीवन-मुक्ति, तदुपरान्त, विदेह-मुक्ति योग से ही प्राप्त होती है। योग के भी भेद—ज्ञान और प्राण-निरोध—हैं। आगे तू दोनों के बारे में अलग-अलग सुन—

ज्ञान—अपने आप को देह समझना, उसी से प्रीति करना, मिथ्या संसार को वास्तविक समझना, ब्रह्म के स्थित्व में अविश्वास का होना, आदि, अज्ञान है—यही अविद्या है; और ब्रह्म की सही जानकारी का हो जाना ही ज्ञान है—यही विद्या है।

यह ज्ञान शुद्ध अन्तःकरण में ही उदय होता है। परमात्मा का यथार्थ ज्ञान होते ही, उनमें अटूट व अडिग आस्था हो जाती है। मन उनमें ही लवलीन हो जाता है।

प्रिय राम ! यही—मन का अविचलित रूप से ब्रह्म में लीन हो जाना ही—जीवन-मुक्ति है। ऐसा प्राणी सब कुछ करता हुआ भी कुछ नहीं करता। सहज प्राप्त कर्मों को करता हुआ भी अपने को अकर्त्ता समझता है। उसे न कुछ करने की ही वांछा रहती है और न कुछ नहीं करने की ही। मर कर नहीं विदेह मुक्त हो जाता है यानी ब्रह्म में मिल एक हो जाता है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्राण निरोध ! मुक्ति का दूसरा साधन है। विशेष कर यही—प्राण-निरोध ही—योग के नाम से प्रचलित है। यह योग, आसन, प्राणायाम, धारणा, ध्यानादि से सुलभ होता है।

इस प्राण योग में योगी जन मुख और नासिका से बाहर निकलने वाली प्राणदि वायुयों की विधिवत् साधना करते हैं। इससे भी मन वश में होता है। विषय-वासनाओं से विमुख हो, वह शांत हो जाता है। मन के शांत होने से, जीव की समस्त वासनात्मक कामनाएँ मर जाती हैं। फिर, वह सुखपूर्वक संसार में विचरता है। मर कर, मोक्ष भी पाता है।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! दोनों—ज्ञान-योग और प्राण-निरोध-योग में साधना में ज्यादा सुगम कौन है ?

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय पुत्र ! यह साधक की अभिरुचि पर निर्भर करता है। किसी को ज्ञान योग तो किसी को प्राण-निरोध-योग आता है। मुझे ज्ञान से ब्रह्म को जानने की विधि ही अच्छी लगी। मैं ब्रह्म का यथार्थ ज्ञान प्राप्त कर ही जीवन मुक्त हुआ हूँ। मुझे तो यही सहज प्रतीत हुआ। अधिकतर लोग उसी को अपनाते हैं।

ऐसे काकभुशुण्डी, जैसे बहुतों ने प्राण-निरोध-योग से ही जीवन-मुक्ति पाई है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गुरुदेव ! काकभुशुण्डी जी की कथा सुनाइए ।

तब श्री रामचन्द्र जी बोले—

काक-भुशुण्डी की कथा

प्रिय राम ! एक बार जब मैं इन्द्र के दरबार में बैठा था, तब शातातय मुनि ने काकभुशुण्डी ज़ी की चर्चा चलाई । उन्होंने कहा—"विश्व में काकभुशुण्डी, सब से ज्यादा समय से, जीते आ रहे हैं ! वे कौआ हैं और सुमेरू पर्वत के एक कल्पवृक्ष पर घोंसला बना कर रहते हैं । वे बड़े ज्ञानी हैं ।"

प्रिय राम ! इतना सुनकर, मुझे काकभुशुण्डी जी से मिलने की जिज्ञासा हुई । मैं इन्द्र के दरबार से सीधा सुमेरू पर्वत पर आया । वहाँ पद्मराज नामक कन्दरा में, दूर से ही एक कल्प वृक्ष दिखलाई पड़ा है उस पर अनेक कौवें बैठे थे ।

उन कौवों के बीच में, ऊँची गर्दन किए हुए काक-भुशुण्डी जी प्रसन्नचित्त बैठे थे । उनके चेहरे से कांति निकल रही थी । पूर्वपरिचित न होने पर भी, बिना बताए ही अपनी ज्ञान दृष्टि से मुझे जान गए थे । मेरे आने की खबर भी, आप से आप पा ली थी । मुझे देखते ही, उठ कर उन्होंने मुझे प्रणाम किया । और बोले—

मुने ! कहिए, कुशल तो है ! फिर, संकल्प से हाथ

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रच, आसन बना, मुझे उस पर बैठाया। सत्कार कर, बातें करने लगे।

मैंने कहा—"हे काकराज ! इन्द्र के दरबार में मैंने सुना है कि दुनिया में आप ने सब से बड़ी जिन्दगी पाई है। अपने लम्बे जीवन का वृतान्त मुझे सुनाइए।"

तब काकभुशुण्डि जी बोले—

हे मुनीश्वर ! शिव जी के अनेक दूत (गण) और शक्तिरूप देवियाँ हैं। उन में एक देवी का नाम अलम्बुसा है। उनकी सवारी (वाहन) चण्ड नामक कौवा है। दूसरे देवियों की सवारी हँसनियाँ हैं।

एक बार सभी देवियों ने धूम-धाम से जलसा किया। उनकी सवारियों ने भी खा-पीकर मस्त हो खूब नाच-गान किया। नाना प्रकार से क्रीड़ा-करते—ब्राह्मी देवी के वाहन सात हँसनियों को चाण्डाल कौवे से गर्भ रह गया।

बाद ब्राह्मी देवी को पता चला तो गर्भवती हँसनियों को कुछ दिनों के लिए छुट्टी दे दी।

समय आने पर सातों हँसनियों ने तीन-तीन अण्डे दिए। उन्हीं अण्डे से हम इक्कीस कौवे-बच्चे निकले।

कुछ बड़े होने पर, मेरे पिता चाण्डकाक हम इक्कीसों-भाइयों को ब्राह्मी देवी के पास ले गए और माथा टेकाए। देवी बहुत प्रसन्न हुईं और आशीर्वाद देती हुई बोलीं—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"चाण्डकाक ! तेरे बच्चे संसार-चक्र में कभी न पड़ेंगे। सब के सब ब्रह्म-ज्ञानी होंगे। इनका चित्त निरंतर ब्रह्म में ही लीन रहेगा। ये शुरू से ही जीवन-मुक्त रहेंगे।"

इस प्रकार से आशीष देकर, देवी ने हम लोगों को इस वृक्ष पर एकान्त-बास करने को कह, विदा किया।

मुने ! देवी के आशीर्वाद से पिता जी बहुत खुश हुए। माताएँ हर्षित हुईं। हम सभी, भाई, इस कल्पवृक्ष पर आकर रहने लगे।

कालान्तर में, अपने-अपने संकल्प से, सभी मर कर, ब्रह्म में मिल, ब्रह्मरूप हो गए। सिर्फ, एक मैं ही तब से जीता रहा हूँ।

मुनीश्वर ! इस कल्पतरु पर, मेरे रहते-रहते अनेक कल्प बीत गए। कितनी बार, महाप्रलय-हुआ. और मेरी आँखों के सामने सारा जगत् नाश हो जलमय हो गया। और कितनी बार सृष्टि को बनते भी देखा। प्रलय के समय, मैं अपने सूक्ष्म शरीर में हो जाता हूँ और सब कुछ दर्शक की नाईं देखता रहता हूँ। सृष्टि की पुनः रचना होने पर, मैं हर बार इसी कल्पवृक्ष पर सुख से बास करता हूँ।

हे मुनीश्वर ! प्राण-निरोध-योग की साधना से मैंने अपनी चित्त-वृत्ति पूर्णतया शांत कर ली है। मैं जगत-जाल से चलायमान नहीं होता। मैं सदा शांत व प्रसन्न

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

रहता हूँ। मेरी चित्त-वृत्ति अविचलित रूप से आत्मा में ही स्थिर रहती है।

मैं भली-भाँति जानता हूँ कि जीवन-मरण शरीर का ही व्यापार है।

मुझे राग-द्वेष नहीं व्यापते। न मैं किसी की निंदा करता हूँ न प्रशंसा ही। मुझे सब में एकत्व आत्मा का ही आभास मिलता है। काठ, सुन्दरी स्त्री, घास, जंगल पहाड़ आदि सब के सब, एक-सा प्रतीत होते हैं। अपने-पराए का जरा भी भान नहीं होता। शरीर-अभिमान तनिक भी नहीं होता। मेरा मन किसी भी परिस्थिति में चलायमान नहीं होता। इसीलिए मैं सुख-शांति से रहता हूँ।

प्रिय राम ! भुशुण्डी जी के इतना कहने पर, मैंने पूछा—"काकराज ! अपनी लम्बी जीवन-अवधि में आप ने क्या-क्या-देखा ?

तब काकभुशुण्डी जी बोले—

मुनीश्वर ! मैंने बहुत आश्चर्य-जनक देखा है।

एक बार, इसी पृथ्वी पर सिर्फ घास व पेड़-पौधे ही थे। एक बार ग्यारह हजार वर्षों तक धरातल पर, सिर्फ भस्म ही था। एक बार, विचित्र सृष्टि बनी। उसमें चन्द्र-सूर्य न थे। सुमेरू पर्वत के कुछ मणियों से ही रोशनी आती थी। दिन-रात मालूम ही नहीं होते थे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

एक बार, देवताओं और दानवों में घमासान लड़ाई छिड़ गई। ब्रह्मा, विष्णु और महेश के सिवा, सभी देवता दानवों के अधीन हो गए। दानवों का आधिपत्य कायम हुआ और १० युगों तक, वे अचल, राज्य करते रहे।

एक समय भूतल पर, सिर्फ पेड़ ही थे और एक समय सिर्फ पहाड़ ही। धरातल पर और कुछ न था। एक बार, इस पर न मनुष्य थे न देवता ही।

एक समय, ब्राह्मण दुराचारी हो गए। वे दारू पीने लगे। शूद्र राज्य करने लगे। सूर्य, चन्द्रादि ग्रह अनेक बार मेरे सामने बने और बिगड़े। कितने राजे-महाराजे जन्मे और मरे।

हे **मुनीश्वर वशिष्ठ** ! आप खुद आठ बार जन्मे और मरे। एगारह बार रामचन्द्र जी अवतरित हुए और सोलह बार कृष्ण भगवान्। वाल्मीकि जी ने बारह बार रामायण की रचना की।

प्रिय राम ! काकभुशुण्डी जी की वार्त्ता से बहुत प्रसन्नता हुई। उनसे विदा ले, मैं अपने स्थान को खुशी-खुशी लौटा।

प्रिय राम ! आत्मा को शरीर से बिलग करते ही, सुख-दुःख, जीवन-मरण सब कुछ दूर हो जायेंगे। ये सब शरीर के साथी हैं। आत्मा को तो ये छू नहीं पाते। जैसे ही तुझे आत्मा होने का भान हो जाएगा, शरीर के साथी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सुख-दुःखादि से तेरा कोई प्रयोजन नहीं रहेगा। तब तू संसार में सुख से विचरेगा।

प्रिय मित्र! आप ने सुमेरू पर्वत की सैर कर ली! अगले पत्र में, कैलास पर्वत की सैर कराऊँगा। प्राकृतिक सौंदर्य दिखलाऊँगा। शंकर भगवान् और माता पार्वती के दर्शन कराऊँगा। वचनामृत पिलाऊँगा। आप के दिल की हर-कली खिल जाएगी। बड़ा आनन्द आएगा।

मैं तो लिखते बक्त अपने को सुमेरू पर्वत पर ही पाता था। वशिष्ठ जी के प्रस्थान करने के बाद तक वहीं था। प्राकृतिक सौंदर्य पान कर रहा था। पढ़ते बक्त जब आप भी अपने को सुमेरू पर्वत पर ही पायें, तब न मेरा लिखना सुफल!

पुनः प्रणाम!

आप का आत्मरूप

गणेश

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्वाण-प्रकरण-पूर्वार्ध

जमशेदपुर

प्रिय मित्र, ३०-१२-६६

सादर प्रणाम !

आज कैलास-पर्वत की सैर करनी है।

भगवान् शिव-वशिष्ठ संवाद

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! एक समय, मैं कैलास पर्वत पर बास करता था। वहाँ कुछ विद्यार्थियों को पढ़ाया करता था।

एक बार आधीरात में, जब मेरी समाधि खुली तो देखा कि घन-घोर अंधेरे को चीरती हुई चाँदनी छिटक रही है। चारों दिशाएँ शांत थीं। मधुर वायु मंद-मंद बह रही थी। मनोहर छटा छा रही थी।

इसी सुहावनी रात में, भगवान् शिव, माता पार्वती के साथ मेरी कुटिया में पधारे। मुझे बड़ी खुशी हुई। सत्कार कर, उन्हें आसन पर बैठाया। फिर बातें करने लगा। मैंने उनसे पूछा—

भगवन् ! ब्रह्म का स्वरूप और उनकी पूजा-विधि मुझे कृपा कर बतलाइए।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भगवान् शिव बोले—

परमात्मा का कोई आकार नहीं है। कोई रूप नहीं है। वह शक्ति रूप से सब ठौर वर्त्तमान रहता है। सब में, सब समय व्याप्त रहता है। उस देव का असली रूप, विष्णु, शिव, इन्द्र, पवन, अग्नि सूर्य आदि नहीं है। वह तो एक अदृश्य शक्ति मात्र है।

वह अदृश्य शक्ति ही देवों का देव है। उसी की पूजा से, मोक्ष की प्राप्ति होती है। उसी की पूजा, सर्वश्रेष्ठ पूजा है। अन्य दोनों की पूजा से अमर फल की प्राप्ति नहीं होती।

सब समय, सब कामों को करते हुए, उस शक्ति (ब्रह्म) का ही अविचलित रूप से चिन्तन करते रहना ही उसकी सर्वोत्तम पूजा है। सिर्फ, पुष्प, धूप, दीप आदि से वह नहीं पूजित होता। वह ध्यान से ही पूजा जाता है। सोते-जागते, चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, भोगों को भोगते हुए,—हर समय-हर हालत में उस ब्रह्म का चिन्तन करते रहना ही, उसकी सर्वोत्तम पूजा है। और वह, ब्रह्म कहीं दूर नहीं है। वह तो सबके हृदय में ही बसता है।

प्रिय राम ! इतना कह कर, भगवान् शिव, माता पार्वती के साथ, अपने स्थान को लौट गए। मैं उनकी बातों को मनन करता रहा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय मित्र ! कर्म-योग, भक्ति-योग, ज्ञान-योग और ध्यान-योग भगवत् प्राप्ति के भिन्न-भिन्न साधन हैं। इनकी चर्चा गीतामृत में विस्तार में हुई है। अच्छा होगा कि आप एक बार पढ़ लें।

मेरे विचार में ब्रह्म-सत्ता का यथार्थ ज्ञान हो जाने पर ही, ध्यान द्वारा उसकी पूजा सुलभ होगी। सिद्ध योगी योगिनी ही, सही रूप से ब्रह्म को केवल ध्यान से ही पूज सकेंगे।

साधना की शुरू में, पुष्प, धूप, दीप, भजन-कीर्तनादि से पूजना सार्थक होगा।

पूर्व जन्म के, वलिष्ट संस्कार के फलस्वरूप, जिन्हें ब्रह्म के स्थित्व का आभास-सहज में ही मिल जाता है, उनके लिए ध्यान-योग शुरू से ही साध्य है। लेकिन ऐसे महापुरुष विरले होते हैं।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! अनासक्ति-योग यानी निष्काम भाव से कर्मों के करने व बिना किसी प्रकार की आसक्ति के संसार में विचरने से भी मुक्ति मिलती है। अर्जुन अनासक्ति योग के साधन से ही संसार में सुख से विचरेंगे।

तब रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! अर्जुन कब होंगे ? उन्हें कैसे उपदेश मिलेगा ?—मुझे बतलाइए।

अर्जुन की कथा

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! संहार-कार्य करते-करते जब यमदेव की शक्ति क्षीण हो जाती है, तब वे हर चौथे युग में शक्ति-अर्जन के लिए, कुछ समय तक तप करते हैं। उनके समा-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हित हो जाने से संहार के कामों में सुस्ती आ जाती है। इससे पृथ्वी पर जीवों की संख्या बहु बढ़ जाती है। पापाचार ज्यादा होने लगता है। पृथ्वी रहने लायक नहीं रह जाती है। दुराचारियों के उत्पात से देवताओं का जीना मुश्किल हो जाता है। तब वे विष्णु भगवान् की शरण में पनाह लेते हैं। विष्णु भगवान् को तब, पृथ्वी पर अवतार ले, दुष्टों का संसांर करना पड़ता है। ऐसा अनन्त काल से होता आ रहा है।

इस समय वैवस्वत महाराज यमदेव हैं। ये ही देवताओं के नायक हैं। संहार-कार्य करते-करते इनका पुण्य क्षीण होता जा रहा है। शक्ति घटती जा रही है। पाप बढ़ता जा रहा है।

पाप-नाश तथा शक्ति-अर्जन के लिए, समय आने पर, यम वैवस्वत देव—तप करने लगेंगे। तब. जीवों का संहार हो न सकेगा। बढ़ जाएँगे और दुराचारी हो पाप करने लगेंगे। पृथ्वी पाप-भार से धसने लगेगी। देव-गण त्राहि-त्राहि करने लगेंगे।

दुष्टों का संहार कर, पृथ्वी का भार उतारने के लिए तब विष्णु भगवान् वासुदेव का पुत्र हो अवतार लेंगे। उनका नाम कृष्ण पड़ेगा।

उसी समय, हस्तिनापुर के राजा पाण्डु के पाँच पुत्र—युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव, होंगे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कृष्ण और अर्जुन मित्र होंगे। अर्जुन को अपने चचेरे भाई दुर्योधन से १८ दिनों तक, घनघोर लड़ाई करनी पड़ेगी।

लड़ाई के प्रथम दिन, जब दोनों तरफ की सेनाएँ, लड़ाई के मैदान में आ जुटेंगी, तब दोनों ओर अपने ही लोगों को लड़ाई के लिए खड़े देख, उन्हें अपने लोगों के लिए ममता जागेगी! वे मोह में पड़, लड़ाई से विमुख होने लगेंगे। और वे अपने जिगरी दोस्त कृष्ण से बोल उठेंगे—"मित्र! अपने लोगों को मार कर, मैं राज्य नहीं चाहता। मैं लड़ूँगा ही नहीं।"

अपने मित्र अर्जुन के मोह दूर करने के लिए, तब कृष्ण भगवान्, उन्हें अनासक्ति योगादि के उपदेश देगें। उन्हें निष्काम भाव से कर्म करने को प्रेरित करेंगे।

प्रिय राम! कृष्ण भगवान् के उपदेश से अर्जुन का मोह दूर हो जाएगा। वे शत्रुओं से भिड़ जाएँगे। उन्हें मार कर, हस्तिनापुर का राज्य हासिल करेंगे। पृथ्वी का भार भी हलका हो जाएगा। फिर अर्जुन अनासक्ति भाव से रहते हुए, संसार में सुख से विचरेंगे।

प्रिय राम! तू भी संसार में, बिना किसी आसक्ति के रह। निष्काम भाव से सहज-प्राप्त सभी कर्मों को करता चल। उस प्रकार से, तू संसार में, सुख-शांति से रह सकेगा।

प्रिय मित्र! गीतामृत में, निष्काम-योगादि की चर्चा कृष्ण-

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अर्जुन संवाद में खूब हुई है। आप दोनों महापुरुषों से पूर्ण परिचित भी हैं। गीतामृत को बार-बार पढ़ें और उपदेशों को आचरण में लावें।

प्रिय मित्र ! उपर्युक्त बातें महर्षि वशिष्ठ की भविष्य-वाणी थीं। उन्हें भविष्य का भी ज्ञान था।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! मैं बार-बार कहता आ रहा हूँ। फिर, भी तेरे हित कह रहा हूँ। तू सुन, और हृदयगंम कर—

यह जगत मिथ्या है। स्वप्नवत् व असत्य है। एक मात्र, मन के फुरने-संकल्पों के उठने से ही भासता है।

ब्रह्म ही, एक मात्र, सत्य है। अज्ञानवश, जो सत्य है, उसका आभास नहीं मिलता। और यह जगत, जो असत्य है, सत्य प्रतीत होता है।

मन को फुरने से रोकने, संकल्पों को न उठने देने पर ही आँख से भ्रम का परदा हटेगा। तभी सत्य-असत्य का यथार्थ बोध होगा। सत्य का बोध होते ही, ब्रह्म का आभास मिल जाएगा। फिर, सब कुछ ब्रह्ममय दीखेगा।

प्रिय राम ! तेरे हित, एक और बात, फिर से कहता हूँ। तू सुन कर दिल में बैठा ले—

जीव, भिन्न-भिन्न, योनियों में, अपनी वासना के अनुसार ही, जन्मता है। जैसी जिसकी वासना रहती है—मरणोपरान्त वैसी ही उसे योनि मिलती है। अगर किसी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

का मन रमणियों में ही रमा रहा—कामातुर हो वह उन्हीं को अपने मन में हमेशा बसाए रहा—तो निश्चय ही अपनी दृढ़ वासना के कारण अगले जन्म में रमणी होगा।

प्रिय राम ! इसीलिए, मैं बार-बार कहता आ रहा हूँ कि तू मन को फुरने से रोक—किसी प्रकार का संकल्प-विकल्प इसे न करने दे और न इसमें कोई भी वासना ही रहने दे। ये तेरे दुश्मन हैं। इनसे पिण्ड छुड़ा। इनसे निबटने की एक सहज युक्ति बताता हूँ। तू सुन हृदयगंम कर और अमल में ला —

चिंता ही दु:ख है। इसका त्याग ही आनन्द का मार्ग है। तू किसी प्रकार की चिंता मत कर। वस, तेरा बेड़ा पार। चित्त का फुरना—संकल्पों का उदय होना—वासनाओं का जागना, सब के सब, आप से आप, खत्म हो जाएँगे।

प्रिय राम ! इसीलिए, मैं आप से बराबर कहता आ रहा हूँ कि आप किसी बात की, व किसी प्रकार की चिंता न करें। सब कुछ आप से आप, सनट जाएगा। सनटता ही तो जा रहा है। आप बेफिकिर रहें—यही मेरा आखिरी कहना है। ऐसे आप की मरजी ! कोई बलजोरी थोड़े है।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय राम ! आगे मैं तुझे राजा शिखिध्वज और चुड़ाला की ज्ञानभरी कहानी सुनाता हूँ। तुझे बहुत भाएगी। शिक्षाएँ भी मिलेंगी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राजा शिखिध्वज और रानी चुड़ाला की कथा

द्वापर युग में, मालव देश में, शिखिध्वज नामक राजा राज्य करते थे। वे बहुत सुन्दर, बीर बलवान और प्रतापी थे। उनकी शादी सुराष्ट्र देश की राजकुमारी-चुड़ाला से हुई। रानी चुड़ाला जैसी सुन्दरी वैसी बिदुषी थी। राजा-रानी में प्रेम अटूट और अगाध हो गया। दोनों खुशी-खुशी रह, सभी प्रकार के भोगों को जी भर भोगते रहे।

एक-एक भोग को बार-बार अनेक बार, फिर-फिर भोगें-फिर भी भोगों से तृप्ति न हुई। इधर जवानी के दिन बीतते-बीतते बीत गए। बुढ़ापे ने नोटिस दे दी। शिर के बाल तिलकने लगे। तब राजा-रानी को चिन्ता हुई। वे आपस में विचारने लगे :—"अनमोल-जीवन भोगों के पीछे दौड़ने में ही बीता जा रहा है। परलोक के लिए, तो कुछ बन पड़ा नहीं। अब-तक जितने भोगों को हम दोनों ने बार-बार भोगा उनमें किसी एक से, भी तृप्ति हुई नहीं। जो भोग वस्तु भोगने के पहले अत्यन्त प्रिय प्रतीत हुई—वही भोगने के बाद फीकी मालूम हुई। किसी में भी सच्चा सुख नहीं मिला। उनसे अब-तक तृप्ति न हुई, तब बुढ़ापे में क्या होगा! शरीर के थकने पर तो, भोग, भोगे भी नहीं जा सकेंगे।"

इस प्रकार से सोचते-विचारते राजा-रानी को विषय-भोगों से नफरत हो गई। सच्चा सुख प्राप्त करने का धून सवार हुआ। विद्वानों से सच्चे सुख का मार्ग (रास्ता) पूछा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

विद्वानों ने एक मत से कहा—"राजन्! आत्म-ज्ञान से ही चिर सुख मिलेगा। आप दोनों आत्म-बोध के लिए प्रयास करें।"

तब राजा-रानी आत्म-ज्ञान की प्राप्ति के लिए साधना करने लगे। रानी की बुद्धि राजा से ज्यादा तेज और शुद्ध थी। साथ-साथ वह ज्यादा प्रयत्नशील थी। उसके पूर्व जन्म के संस्कार भी वलिष्ठ थे। उसे आत्म-ज्ञान राजा से पहले ही प्राप्त हो गया। उसकी समस्त कामनायें विलीन हो गईं। चिन्ताएँ दूर हो गईं। वह सदा एक-सा प्रफुल्लित रहने लगीं। उसका व्यक्तित्व दमक उठा। उससे प्रेम, आनन्दादि के प्रकाश निकलने लगे।

रानी ने राजा को आत्म-बोध कराने का भरसक प्रयत्न किया। लेकिन, राजा ने उसकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। स्त्री से उपदेश लेना उन्हें अच्छा न लगा। पुरुष स्त्री से ज्यादा जानता है—यह उनका मिथ्या अभिमान टिका रहा। इधर अपने प्रयास से उन्हें आत्म-ज्ञान हुआ नहीं। उनका मन उब गया। एक रात में रानी को सोई छोड़ कर, वे राज-पाट त्याग आत्म-बोध के लिए वन चले गये। वहाँ आत्म-ज्ञान के लिए कठिन तप करने लगे।

इधर रानी चुड़ाला की जब आँखें खुलीं तो उसने राजा को गायब पाया। वह तुरंत ताड़ गई कि राजा आत्म-ज्ञाम की खोज में निकल पड़े हैं। राजा के लौटने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तक, राज-काज सँभालना, उसके लिए जरूरी हो गया। सुबह होते ही, उसने मंत्रियों को बुलाया और घोषणा करा दी कि राजा दूसरे देशों की यात्रा पर चले गए हैं। रानी को राज्य करने का अधिकार सौंप गए हैं। वह अच्छी तरह राज्य करने लगीं।

राज-काज संभाल लेने के बाद, राजा की खोज करने की उसकी इच्छा हुई। समाहित हो, योग-बल से उनका पता लगाया। दिव्य-दृष्टि से उसने देखा कि राजा जंगल बीच बैठ, तप कर रहे हैं।

तब रानी चुड़ाला सूक्ष्म शरीर से, आकाश मार्ग से जंगल में गईं। राजा से कुछ दूर पर आकाश से जमीन पर उतरीं। उसने दूर से ही देखा कि राज-महल में ठाट-बाट से रहने वाला राजा, कोपीन लपेटे जंगल में तन को जला रहे हैं। उनका कोमल शरीर सूख गया है। चेहरे पर, अभी भी चिंता व ग्लानि की रेखाएँ पड़ी हैं। राजा को इतने पर भी आत्म-ज्ञान नहीं हुआ जान, रानी को दया आई।

रानी चुड़ाला, मन-ही-मन, विचारने लगीं—"आखिर क्या किया जाय! राजा को आत्म-ज्ञान का उपदेश कैसे दिया जाय! मेरे उपदेशों की तो वे अवहेलना करेंगे—क्योंकि उनकी मैं स्त्री हूँ।" तब रानी को एक युक्ति सूझी। वह एक सुन्दर नवयुवक-ब्राह्मण-ऋषि-पुत्र के वेष में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

राजा के पास जा प्रकट हुईं। राजा ऋषि पुत्र को पधारे देख, बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने उनका उचित सत्कार कर कुशासन पर बैठाया। और उनके पास बैठ बातें करने लगे।

तपस्वी वेषधारी राजा शिखिध्वज बोले—

देवपुत्र ! आज मेरा अहोभाग्य है कि आप पधारे ! आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया। अब कहिए—आप कौन हैं।

देवपुत्र वेष में चुड़ाला बोलीं—

तपस्वी ! मैं ऋषि नारद का पुत्र हूँ। कुम्भज मेरा नाम है। देवलोक से कौतूहलवश मत्यु-लोक में भ्रमण करने आया हूँ। आकाश मार्ग से जाते हुए आपको देखा। देखने ही से आप महापुरुष मालूम पड़े। आपसे मिलने आ गया हूँ। अब आप, अपना हाल कहिए। तन को तपा कर आपने क्या सिद्धि पा ली ? आत्म-बोध आपको हो गया क्या ? आप में तो राजा के लक्षण विद्यमान हैं। सूखे शरीर में कान्ति है।

राजा शिखिध्वज बोले—

देवपुत्र ! आप तो स्वयम् सब कुछ जानते हैं। फिर भी मैं कहता हूँ :—

मैं मालव देश का राजा हूँ। मेरा नाम शिखिध्वज है। मेरी रानी का नाम चुड़ाला है। मेरी पत्नी चुड़ाला

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जैसी रुपवती वैसी ही विदुषी है। दोनों में प्रीति अटूट है। दोनों एक दूसरे के प्राण से भी प्रिय रहे हैं। रानी का शरीर आप जैसा ही, सुकोमल है। हम दोनों ने सभी प्रकार के इच्छित भोग भोगे। उमर ढलने पर, आपस में सलाह कर हम दोनों विषय-वासनाओं का त्याग कर, आत्म-ज्ञान के लिए साधना करने लगे।

देवपुत्र ! रानी को आत्म-ज्ञान सहज में ही हो गया—लेकिन मुझे अब-तक न हुआ। रानी के उपदेशों पर मैंने स्त्री समझ ध्यान नहीं दिया। आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के लिए राज-पाट छोड़ इस बीरान जंगल में रह रहा हूँ। रानी राज-काज संभालती होगी।

(देवपुत्र वेष में) चुड़ाला बोली—

राजन् ! आप किसी गुरु के चरणों में बैठ कर आत्म-ज्ञान का उपदेश क्यों नहीं लेते ! यहाँ व्यर्थ समय क्यों गँवा रहे हैं ? कुश की चटाई, कमण्डलु, दण्ड-काठ, पर्णकुटी आदि से एक नये घर में बसेरा लें—इस संसार में विचरने से आप को क्या मिलता है ? आप कौन हैं ? जगत क्या है ? शांति-मार्ग क्या है ? आदि बातों का ज्ञान ज्ञानी गुरु से क्यों नहीं प्राप्त करते ?

इतना सुनते-सुनते राजा शिखिध्वज की आँखों से अश्रु धारा बह चली। वे गद्-गद् कंठ से बोले—

देवपुत्र ! मुझे लगता है—आज मेरा भाग्य उदय

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

हुआ है। तभी आप जैसे महात्मा के दर्शन हुए हैं। आप जैसे ब्रह्म-ज्ञानी गुरु को पाकर भी, मैं, क्यों दूसरे गुरु की खोज में जाऊँ ? कहाँ जाऊँ ? किसके पास जाऊँ ? माता-पिता, गुरु, मित्र मेरे सब कुछ आप ही हैं। मुझे आत्म-ज्ञान का उपदेश आप स्वयम् दीजिए। मुझ पर कृपा कीजिए।

(देवपुत्र वेष में) चुड़ाला बोली—

राजन् ! यदि मेरे वचनों में आपको पूर्ण श्रद्धा है, तो मेरी बातों को वैसे ही सही मानेगें—जैसे छोटा बालक अपने माता-पिता की हर बात सही मानता है, तभी मैं आत्म-ज्ञान का उपदेश करूँगा—अन्यथा नहीं। क्योंकि गुरु के वचनों में अश्रद्धा रहने से कुछ लाभ नहीं होता।

तब राजा शिखिध्वज कर जोड़ कर नम्रता से बोले—

गुरुदेव ! मैं आपके वचनों को शत-प्रति-शत वेद-वाक्य की तरह सही मान ग्रहण करूँगा।

(देवपुत्र वेष में) चुड़ाला बोली—

राजन् ! आप की प्यारी रानी चुड़ाला ब्रह्म-ज्ञानी है। अगर आपने उसके उपदेशों को मान लिया होता तो आत्म-बोध के लिए जंगल में न आना पड़ता। उसकी बात न मानी, तो सर्वत्याग भी तो नहीं किया।

राजा शिखिध्वज बोले—

गुरुदेव ! मैं राज-पाट, धन-दौलत, स्त्री-पुत्र सब

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

कुछ त्याग जंगल में आ बसा फिर भी सर्वत्याग कैसे न हुआ ?

तब देवपुत्र कुम्भज के वेष में चुड़ाला बोली—

राजन् ! राज-पाट, स्त्री-पुत्र आदि आप के नहीं हैं। इनका क्या त्यागना है। जो आप का अपना है, उसे तो त्यागा ही नहीं।

तब शिखिध्वज बोले—

तो, ये कुश की चटाई, कमण्डलु, दण्ड-काठ, ये पर्ण-कुटी ही मेरे हैं—मैं इन्हें भी त्याग देता हूँ।

इतना कह कर, शिखिध्वज ने पर्ण-कुटी में आग लगा दी। उसी में कमण्डलु आदि भी जला डाले। फिर बोले— देवपुत्र अब तो सब कुछ त्यागा !

देवपुत्र कुम्भज बोले—

राजन्—जो आप का अपना है, उसे तो त्यागा नहीं। शिखिध्वज बोले—अब तो शरीर ही बचा है। पहाड़ से कूद उसे भी त्याग देता हूँ।

इतना कह राजा शिखिध्वज शरीर त्यागने के लिए चल पड़े। उनको रोकते हुए देवपुत्र कुम्भज के वेष में चुड़ाला बोली—

ठहरिए राजन् ! ठहरिए। बेचारे शरीर ने कौन सा अपराध किया है कि उसे नाश करने जा रहे हैं ? यह तो जड़ है। मूक है। इसे नष्ट कर क्या पावोगे ? यह भी तो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आप का अपना नहीं है। अपना तो आपका चित्त है। चित्त को त्यागे बिना सर्व-त्याग कैसे होगा ?

राजन् ! राज-पाट, धन-दौलत, स्त्री-पुत्रादि चित्त के भीतर है। चित्त ही इनको गढ़ता है। सब का संबंध चित्त से ही है। चित्त स्वयम् सब कुछ बनाता है। चित्त को त्यागने से ही सब कुछ का त्याग स्वतः हो जाता है। आधि (मानसिक रोग)—व्याधि (शारीरिक रोग) आदि समस्त क्लेशों का भी त्याग हो जाता है—क्योंकि सब का संबंध चित्त से ही है। राजन् ! अपने चित्त को त्याग दीजिए—यानी मन में किसी प्रकार की कामना, संकल्पादि उठने न दीजिए। उसे पूर्ण रुप से निर्विकार और निर्विकल्प बना डालिए।

राजन् ! चित्त-त्याग को ही सर्वत्याग कहा गया है। लेकिन इस सर्वत्याग के बाद भी एक और त्याग की बारी आती है और वास्तव में वही अंतिम त्याग है। वह है—सर्वत्याग से आता हुआ अपने में सर्वत्याग के अहं-भाव। आप सब कुछ त्याग कर सर्वत्यागी हो गये—इस भावना का भी त्याग कर डालिए। राजन् ! फिर आत्म-ज्ञान हुआ ही जानिए।

महर्षि वशिष्ठ जी कहते हैं—

प्रिय राम ! राजा शिखिध्वज को देवपुत्र कुम्भज के सर्वत्याग के उपदेश पर विचारते-विचारते आत्म-ज्ञान हो

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

गया। वे अब चुड़ाला की तरह प्रसन्न चित्त रहने लगे। उनका उदास चेहरा खिल उठा। वे सुख पूर्वक जंगल में ही रहने लगे। रानी चुड़ाला देवपुत्र कुम्भज के वेष में राजा के साथ रहने लगी। बीच-बीच में जाकर राज-राज भी देख आया करती थी। दोनों में सत्संग की बतौर आत्म-चर्चा होती। दोनों घनिष्ठ मित्र की नाईं घुल-मिल कर रहते। परस्पर के वार्तालाप से अमित सुख पाते।

रानी की इच्छा अब राजा की परीक्षा लेने की हुई। कुम्भज वेष में, एक दिन, वह अत्यन्त उदास लौटी। राजा ने पूछा—देवपुत्र ! आज आप उदास क्यों हैं ? देवपुत्र कुम्भज वेष में चुड़ाला बोली।

मित्र ! शरम के मारे कुछ कहते नहीं बनता। आज जब मैं देवलोक से आ रहा था—रास्ते में दुर्वाशा-ऋषि मिल गए। वे विचित्र कपड़े-गहने पहने हुए थे। देख कर मुझे हँसी आ गई। और मैंने मजाक में कहा— ऋषि आज तो आप औरत-जैसी लगते हैं। उन्होंने बिगड़ कर शाप दे दिया कि मैं आज से रात्रि में स्त्री हो जाया करूँगा। लज्जा से अब तो, मैं देवलोक को भी न जा सकूँगा। मित्र ! यही मेरे दुःख का कारण है।

शिखिध्वज बोले—इसमें उदास होने की क्या बात है ? शरीर तो शरीर ही है। चाहे मर्द का हो चाहे औरत का।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

इससे क्या बनता-बिगड़ता है ! आत्मा तो शरीर से परे है। उसके लिए जैसी स्त्री की देह वैसी पुरुष की। आप तो खुद ब्रह्म-ज्ञानी हैं। सब कुछ जान कर अनबूझ क्यों बनते हैं ! हर रात यहीं रहिए न जाइए देवलोक।

कुम्भज वेष में रानी चुड़ाला अब रात्रि में सुन्दर स्त्री बन राजा के साथ रहने लगी। एक सुन्दर नवयुवती के साथ रहने पर भी राजा के चित्त में कुछ भी विकार नहीं उत्पन्न हुआ। उनके दिल में अब स्त्री-पुरुष का भेद ही न रहा।

अब, चुड़ाला ने राजा की और परीक्षा लेनी चाही। एक दिन उसने कहा,—"राजन् ! रात में, मैं जब स्त्री हो जाता हूँ, तब स्त्रीवत् बर्त्ताव करने की इच्छा होती है। मैं कामातुर होकर, बहुत दुःखी हो जाया करता हूँ।"

तब तपस्वी राजा बोले—

देवपुत्र ! दुःखी रहना बेकार है। जब-तक शरीर कायम है और जब तक, इन्द्रियों में बल है, तब-तक स्वाभाविक भोगों को भोगने की प्रवृत्ति इन्द्रियों में रहेगी ही। उन्हें बलपूर्वक रोकने से हानि ही होती है। आप मन-पसंद वर चुन कर, विवाह कर लीजिए और रात में स्त्री बन जाने पर, उसके साथ सुख से रहिए।

कुम्भज वेष में चुड़ाला बोली—

राजन् ! आप मेरे मित्र हैं। हम दोनों का स्वभाव

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भी एक-सा है। दोनों एक मत के हैं। शास्त्रों में भी सम स्वभाव व मतवाले दो प्राणियों के प्रणय-मिलन को उत्तम कहा गया है। फिर, मैं क्यों और कहाँ वर ढूढ़ने जाऊँ ? आप के सिवा मुझे कोई दूसरा वर नहीं जँचता।

राजा शिखिध्वज बोले !

देवपुत्र ! आत्म-ज्ञानी को विवाह करने और न करने से, तथा काम, भोगों को भोगने और न भोगने से कोई अन्तर नहीं पड़ता—क्योंकि इनका सम्बन्ध सिर्फ शरीर से है आत्मा से नहीं। अगर आप को मुझसे ही विवाह करने में सुख है—तो मैं आप के सुख के लिए तैयार हूँ।

प्रिय राम ! (महर्षि वशिष्ठ कहते गए), फिर, दोनों मित्रों ने पुष्प, फलादि जंगल से एकत्र कर, विवाह की तैयारी कर ली और चांदनी रात की सुहावनी शुभ घड़ी में प्रणय-सूत्र में बँध गए। वधू का नाम मन्दाकिनी पड़ा यानी कुम्भज वेष में रानी चुड़ाला रात्रि में नवयुवती हो जाने पर, मन्दाकिनी कहलाने लगी।

दिन में राजा शिखिध्वज और देवपुत्र कुम्भज मित्र की तरह रहते और रात्रि में कुम्भज के स्त्री बन जाने पर, पति-पत्नी की तरह।

राजा के मन में स्त्री-सहवास से भी किसी प्रकार का विकार नहीं पैदा हुआ। उनका चित्त एक-सा शांत रहा।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

तब रानी ने विचार किया कि राजा की एक और कड़ी परीक्षा लेनी चाहिए।

एक दिन, संध्या समय, जब राजा नदी स्नान को गए तब रानी संकल्प से एक सुन्दर पुरुष तैयार कर, चांदनी रात में, कुटी के बगल वाले कुञ्ज में ही विहार करने लगी। इतने में, राजा नदी से स्नान कर लौटे, तो रानी यानी मन्दाकिनी को कुटी में न पाकर, इधर-उधर, बाहर देखने लगे। बगल के मनोहर कुञ्ज में, एक सुन्दर पुरुष से आलिंगन करती देख पड़ी। राजा ने तुरन्त मुँह फेर लिया और कुटी में लौट गए ताकि उनके मिलन में बाधा न हो।

मन्दाकिनी, उदास मुँह बनाए, एक दोषी की तरह राजा के पास आई और बोली !

स्वामी ! मैं दोषी हूँ। मैं स्त्रीवत्.................!

तब तपस्वी वेषधारी राजा शिखिध्वज बोले—

मन्दाकिनी ! तेरे पर-पुरुष के मिलन से मेरे चित्त पर, कुछ भी—अच्छा-बुरा असर नहीं पड़ा है। न मुझे तुझ पर क्रोध है, न उस पुरुष पर ही और न किसी प्रकार का द्वेष ही। संसार में हर जीव सुख चाहता है। अपने मन चाहे, प्रेमी-प्रेमिका के मिलन से ही इच्छित सुख मिलता है। तूने उस पुरुष से सुख-प्राप्त कर कोई भूल न की। मुझे इसके लिए जरा भी दुःख नहीं है।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

सिर्फ, इतना ही कहना है कि आज से हम दोनों पति-पत्नी के रूप में न रह, मित्र की तरह रहेंगे, क्योंकि पर पुरुष से सहवास शास्त्र में वर्जित है।

तब रानी ने मन्दाकिनी का रूप त्याग कर, अपना असली रूप चुड़ाला का धर लिया और बोली—

स्वामी ! मैं आप की रानी चुड़ाला हूँ। आप को आत्म-बोध कराने के लिए ही मैंने, अपने योग-बल से, देव-पुत्र कुम्भज का रूप धारण किया था। आत्म-ज्ञान से आपका चित्त बिलकुल स्थिर हुआ कि नहीं ?—इसकी परीक्षा लेने के लिए ही, मन्दाकिनी बनना पड़ा, तथा संकल्प से सुन्दर-पुरुष की रचना कर, सहवास का स्वांग करना पड़ा।

स्वामी ! आप परीक्षा में खरे निकले। आप का चित्त बिलकुल शांत हो गया है। अब दुनिया की विकट से विकट घटना भी इसे अशांत न कर सकेगी। स्वामी ! आप को जीवन मुक्ति मिल चुकी। जिस आत्म-ज्ञान के लिए, आप राज-पाट छोड़, जंगल आए, वह मिल चुका। अब, आप के लिए, जैसा जंगल वैसा महल। जैसा त्याग वैसा भोग।

राजा के न रहने से, राज्य में अराजकता फैलेगी। प्रजा तबाह होगी। स्वामी ! प्रजा-हित, अब राजधानी लौट चलिए। निष्काम भाव से राज-काज देखते हुए, शेष जीवन को दोनों प्राणी व्यतीत करें।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! आत्म-ज्ञानी राजा शिखिध्वज को रानी की बात भली लगी। वे रानी के साथ राज-महल वापस आ गए। निष्काम तथा अनासक्ति भाव से राज-काज संभालते हुए, रानी के साथ सुखपूर्वक रहने लगे।

प्रिय राम ! अच्छे कुल की स्त्रियाँ, मोह-सागर में, अनन्त काल से पड़े हुए, पति को भी पार उतारती हैं। उन्हें आत्म-ज्ञान कराती हैं। इस काम में—पति को आत्म-बोध कराने में—स्त्रियाँ, शास्त्र, गुरु, मंत्रादि वे भी ज्यादा सहायक होती हैं।

पत्नी, पति के लिए, वन्धु-सखा, मित्र, भृत्य, गुरु, धन, सुख, शास्त्रादि सब कुछ हैं। इनका सत्कार, सब प्रकार से करना चाहिए। ये प्रतिष्ठा और पूजा की अधि-कारिणी हैं। लोक-परलोक दोनों को सँवारने वाली हैं।

प्रिय मित्र ! निर्वाण-प्रकरण-पूर्वार्ध की चर्चा समाप्त हुयी। अगले पत्र में निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्ध की जाएगी।

प्रिय मित्र ! शुरू से ही नारी एक पहेली बनी रही है। सदा से इसकी निन्दा और प्रशंसा होती आई है। किसी-किसी ने उनकी निन्दा की है तो बहुतों ने प्रशंसा भी। वास्तव में लेखक व कवि की लेखनी उनके हृदय-विचारों को ही प्रस्तुत करती है। दुर्भाग्यवश, जिन्हें जीवन में मां, पत्नी आदि का अगाध प्यार नसीव नहीं होता, तथा जो अपनी कमजोरियों के कारण अपनी मनचाही प्रेमिका को अपना नहीं पाते, उनकी लेखनी ही नारियों के प्रति जहर उग-लती है; औरों की तो प्रशंसा ही करती हैं।

मुझे मां का प्यार—अथाह मिलता आ रहा है। पत्नी का भी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अगाध मिला। जीवन-यात्रा में बहुतों के संपर्क में आया। सब से, सद्भावना व सहानुभूति मिलती रही और कही-कहीं खास प्यार भी। धोखा किसी से भी नहीं। यही कारण है कि मेरी लेखनी नारियों का यश-गान करती अघाती नहीं।

अपने दिनांक २१-६-१६३७ (ता० इक्कीस माह नौ सन् उन्नीस सौ सैंतीस) के 'प्रेम का वास स्थान' नामक अप्रकाशित लेख में मैंने लिखा है—

'प्रेम का वास-स्थान' नारियों का हृदय है, न कि पुरुषों का।

अपने कथन की पुष्टि, मैंने मां तथा पत्नी के अतुलनीय प्यार के उदाहरण से की है। आपने तो मेरा यह लेख पढ़ा ही है। आज से करीब तीस वर्ष पहले के लिखे मेरे इस लेख से यही प्रतीत होता कि मेरा हृदय नारियों के प्रति अगाध श्रद्धा, प्यार व भक्ति से बराबर लबालब भरा रहा है।

दूर भटकता जा रहा हूँ। अब विदा दीजिये।

पुनः सप्रेम प्रणाम !

आप का आत्मरूप
गणेश

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्ध

प्रिय मित्र, **सवा चार बजे भोर**

१-१-६७

सादर प्रणाम !

पिछले पत्र में, निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्ध की चर्चा समाप्त हो चुकी है। निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्ध की शुरू की जाती है।

आज वर्ष (१९६७) का प्रथम दिन है। नये वर्ष के लिए, आप को हार्दिक बधाई है—नूतन वर्ष आप के लिए हर तरह की खुशियाँ विखेरे ! आप स्वस्थ व प्रसन्न रहें, आत्म-चिन्तन में लगे रहे !!— यही मेरी शुभ कामनाएँ हैं और सूक्ष्म प्रेमोपहार ही, मेरी एक मात्र भेंट है।

प्रिय मित्र ! एक प्रकार से यह–निर्वाण-प्रकरण-उत्तरार्ध-पूर्वार्ध की तरह योग-वाशिष्ठ का उपसंहार स्वरूप है। जिन-जिन सिद्धान्तों की चर्चा होती आई—उन सब का इसमें प्रतिपादन हो जाता है। पुनरुक्ति भी हैं। उसकी कुछ कहानियाँ, पिछले प्रकरणों में दी गई आख्यायिकाओं के ही भाग हैं। और कुछ के सिद्धान्त उनकी पुनरुक्ति हैं। इस प्रकरण के मुख्य-मुख्य विषयों की जानकारी आप संक्षेप में ही कर लीजिए।

अब विषय-प्रसंग पर आवें।

पूर्ववत् राजा दशरथ के दरबार में, सत्संग मण्डली बैठी।

महर्षि वशिष्ठ बोले—

प्रिय राम ! निष्काम भाव से कर्म करने तथा

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

अनासक्त भाव से संसार में विचरने के गूढ़ रहस्य को मैं पुनः तुझे साफ-साफ बतलाता हूँ। तू अच्छी तरह समझ कर अमल में ला।

हर प्राणी, हर समय, अपने सहज स्वभाववश कुछ-न-कुछ, करता ही रहता है। क्षण-भर भी बिना कर्म किए नहीं रह सकता। अतएव कर्मों का सर्वथा त्याग किसी भी प्राणी के लिए संभव नहीं है।

कर्मों के फल की आशा नहीं रखता हुआ, सहज प्राप्त, नियत कर्मों को बिना किसी आसक्ति के करते जाना ही—निष्काम भाव से कर्म करना है। यही कर्मों का त्याग भी कहलाता है। मन में वासना रखे हुए, बाहरी कर्मों को करने से कर्मेन्द्रियों को हठपूर्वक रोकने से कर्म-त्याग नहीं होता। इस प्रकार के त्याग से तो लाभ के बदले हानि ही होती है।

सभी जीव धारियों के शरीर में, एक ही आत्मा के होने का भान होते ही, अपने-पराये की धारणा जाती रहती है। सभी जीवधारियों में अपना ही रूप दीखने लगता है। एकत्व आत्मा का भान होते ही, पृथकत्व आप से आप समाप्त हो जाता है। फिर, जीव अनासक्त भाव से, संसार में सुख से विचरता है।

प्रिय राम! सत्संग के दौरान में, मैंने एक बार काकभुशुण्डि जी से पूछा—"काकराज! क्या संसार में

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ऐसा भी मूर्ख प्राणी हुआ है—जो अनन्त काल तक जीवित रह कर भी, आत्म-ज्ञान प्राप्त न कर सका हो ?

तब भुशुण्डि जी बोले—

विद्याधर की कथा

पुराने जमाने में, विद्याधर नामक एक ब्राह्मण, ऐसा हुआ। उसे शास्त्रों की जानकारी थी। वह शुद्ध-सात्विक जीवन बिताने की भरसक कोशिश करता था। आत्म-ज्ञान के लिए उसने बहुत समय तक तप भी किया। फिर, भी उसे आत्म-बोध न हुआ।

एक दिन विद्याधर, मेरे पास आया और बोला—"मैं अपने शुरू जीवन में बहुत विषयी था। बहुत समय तक भोगों को भोगता रहा। एक-एक, भोग को, बार-बार, अनेक बार, फिर-फिर भोगा। फिर भी उन भोगों से तृप्ति न हुई, सच्चा सुख न मिला। शांति न मिल सकी।

अंत में मैंने आत्म-ज्ञान प्राप्त करने की ठानी। अपने कर्मेंद्रियों को भोगों को भोगने से रोका। आत्म-बोध के लिए तप किया, शास्त्रों को बार-बार पढ़ा—अपने जाने हर कोशिश की, किंतु अभी-तक आत्म-ज्ञान न हो पाया। चित्त निरंतर अशांत ही रहता है। मुझे आत्म-ज्ञान का उपदेश दीजिए।"

प्रिय राम ! विद्याधर के उपर्युक्त प्रकार से कहने

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

पर, काकभुशुण्डि जी ने उसे अपने पास रहने की सलाह दी। वह (विद्याधर) उनके पास रहने लगा ! काकभुशुण्डि जी, उस पर नजर रखते रहे।

कुछ दिनों के बाद, काकभुशुण्डि जी को पता चला कि विद्याधर ने अपनी कर्मेंद्रियों को भोगों के भोगने से हठपूर्वक रोक रखा था। मन में भोगों की वासना दबी पड़ी थीं। वे भीतर-भीतर मन में बिकार पैदा करती थीं और उसके चित्त को स्थिर नहीं होने देती थीं। उसी कारण बेचारे को आत्म-बोध नहीं हो पाता था।

तब, सर्व प्रथम, काकभुशुण्डि जी ने अपने उपदेशों से उसकी सोई हुई वासनाओं को जगाया। फिर, उन्हें आवश्यक उपदेशों से दूर किया। वासना रहित हो, विद्याधर का मन निर्मल व निर्विकल्प हो गया। फिर, उसे सहज में ही आत्म-बोध हो गया। वह अब सुख से विचारने लगा।

प्रिय राम ! वासनाओं को दूर कर, मन को निर्मल किए वगैर आत्म-बोध नहीं होता।

प्रिय मित्र ! भोगों की तृष्णा को पालते हुए, लाचारीवश अथवा हठपूर्वक शरीर से भोगों के न भोगने मात्र से ही काम न चलेगा। भोगने की वासना ही मन से दूर करनी होगी। ऐसा न होगा कि हम लोग, भोगों के बारे में चिन्तन कर, उनका मन से काल्पनिक उपभोग भी करते रहें और सिद्धि भी प्राप्त कर लें।

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

ब्राह्मण मङ्की की कथा

प्रिय राम ! एक समय की बात है कि तेरे पितामह राजा अज के कार्यवश, मैं आकाश-मण्डल से धरती पर उतर, अयोध्यापुरी को चल पड़ा। रास्ते में, घनघोर जंगल के बीचो-बीच मुझे मंकी नामक एक ब्राह्मण पथिक से मुलाकात हो गई।

बातचीत से मालूम हुआ कि ब्राह्मण पथिक सदाचारी व विवेकशील व्यक्ति था। फिर भी चिन्तित था।

बातचीत में मैंने पूछा, "ब्राह्मण देवता आप कौन हैं ? इस तपती धूप में, विकट जंगल से होकर, कहाँ जा रहे हैं ? आप इतना परेशान क्यों हैं ?

प्रिय राम ! तब, वह ब्राह्मण पथिक मेरा परिचय मुझसे पूछ कर बोला—

"मैंने अपने जीवन में भोगों-को भोग-भोग अनुभव किया कि सभी भोग क्षणिक सुख भासने वाले हैं और अंत में सब के सब दुखदाई हैं। फिर मैं अथक प्रयास से इन वासनाओं को मन से दूर कर आत्म-ज्ञान के लिए प्रयास करने लगा हूँ। अभी, मैं तीर्थाटन से, लौट रहा हूँ। यथाशक्ति शास्त्रों का भी अध्ययन मैंने किया है। लेकिन उतने पर भी आत्म-बोध नहीं हुआ है। मेरा मन अशांत ही रहता है। मैं आत्म-ज्ञानी गुरु की खोज में ही था। भाग्य

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

से, आप अनायास ही मिल गए। मुझे आत्म-तत्व का उपदेश देकर, मेरा संताप दूर कीजिए।"

प्रिय राम ! इतना कहते-कहते, ब्राह्मण पथिक का गला भर आया। आँखों से अश्रु-धारा बह चली। तब मैंने कहा—"आत्म-ज्ञान का जिज्ञासु विप्र ! तू धन्य है ! तेरी वासनाएँ दूर हो गई हैं। तेरा चित्त निर्मल हो गया है। तू आत्म-ज्ञान का अधिकारी है। तुझे थोड़े उपदेश से ही आत्म-बोध हो जाएगा।

ब्राह्मण पथिक ! मन के फुरने से ही, यह जगत् वासना है। वास्तव में यह निरा काल्पनिक और मिथ्या है। ब्रह्म ही, एक मात्र, सत्य है। उससे परे कोई सत्ता नहीं है। ब्रह्म ही सर्वत्र है। वही सब जीवों में आत्मरूप में विद्यमान है। एकत्व आत्मा का आभास होते ही पृथकत्व का अभाव हो जाएगा। ब्रह्म का आभास मिलते ही जगत् का भी अभाव हो जायगा। फिर, तो, सब कुछ ब्रह्ममय ही दीखने लगेगा। फलतः चित्त ब्रह्म में स्थिर हो जाएगा।

ब्रह्म में अविचलित रूप से चित्त के स्थिर हो जाने का नाम आत्म-ज्ञान है। यही जीवन-मुक्ति है।"

प्रिय राम ! थोड़े उपदेश से ब्राह्मण पथिक-मंकी को आत्म-बोध हो गया। जीवन-मुक्त हो वे संसार में सुख-शांति से विचरने लगे।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

प्रिय राम ! यद्यपि, केवल गुरु-उपदेश और शास्त्र के अध्ययन, मननादि से ही ब्रह्म की जानकारी नहीं होता, तो भी बार-बार, गुरु के उपदेशों को सुनने तथा शास्त्रों के लगातार अध्ययन करने से कभी-न-कभी आत्म-बोध हो ही जाता है।

गुरु उपदेश और शास्त्राध्ययन की उपयोगिता तुझे, पुरुषार्थी लकड़हारों के दृष्टान्त से साफ-साफ मालूम हो जाएगी ।

पुरुषार्थी लकड़हारों की कथा

एक बार, व्यवधान देश में भीषण अकाल पड़ा । लोग दाने-दाने, को मुहताज हो गए । कुछ पुरुषार्थी प्राणी जंगल से लकड़ियाँ लाकर, बेंच-बेंच कठिन परिश्रम से जीविका उपार्जन करने लगे। इस प्रकार से प्रति दिन जंगल में लकड़ियाँ चुनते-चुनते, कुछ लोगों को चंदन की लकड़ी मिल गई, जिससे ज्यादा पैसा मिला और वे खुश-ह्राल हो गए ।

कुछ लोगों को लकड़ियाँ चुनते-चुनते जंगल में ही, चिन्तामणि मिल गई। उनकी गरीबी ही दूर हो गयी। वे धनवान बन गए ।

प्रिय राम ! जिन लोगों में आलसवश कठिन

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

परिश्रम से डर कर, जंगल में लकड़ी चुनने न गए, वे भूख से मर गए।

गुरु-उपदेश और शास्त्राध्ययन भी उसी जंगल की तरह हैं। अविद्या उसी दुर्भिक्ष की तरह है। गुरु और शास्त्र के उपदेश ही लकड़ी रूप में हैं। जैसे—लकड़हारों की दरिद्रता बन से लकड़ियाँ चुनते-चुनते दूर हो गयी और वे धनाढ्य हो गए वैसे ही गुरु व शास्त्र के वचनों को ग्रहण करते-करते अविद्या रूपी आपदा एक-न-एक दिन अवश्य दूर हो जाती है। और कभी-न-कभी ब्रह्म की जानकारी हो ही जाती है।

प्रिय मित्र ! ब्रह्म की जानकारी के लिए, चित्त-शुद्धि आवश्यक है। गुरु उपदेश तथा शास्त्राध्ययन से चित्त को निर्मल करने में सहायता मिलती है। चित्त-शुद्धि के बाद ये आत्म-बोध कराने में भी सहायक होते हैं। फिर, जो निपढ़ हैं, जिन्हें शास्त्र व गुरु के वचनों को सुनने का शुअवसर नहीं मिलता है, उन्हें निराश होने की आवश्यकता नहीं। शास्त्र व गुरु के बिना भी आत्म-बोध सुलभ है।

मित्र ! सुदूर दिहातों में ऐसे बहुत लोग मिलेंगे जो निपढ़ हैं, जिन्हें शास्त्र व गुरु के वचनों को सुनने का सौभाग्य प्राप्त कभी न हो सका है, फिर भी वे ब्रह्म-ज्ञानी हैं। इनका चित्त निर्मल है। उनकी आस्था ब्रह्म में अटूट है। उनका मन निरंतर ब्रह्म में लीन रहता है। ईर्ष्या-द्वेष उन्हें नहीं व्यापते। वे पूर्ण संतोषी हैं। उनकी समस्त कामनाएँ व वासनाएँ सोई हुई हैं। जो सही माने में पराये स्त्री को माता तुल्य समझते हैं। आधा पेट खाकर और विहटी लपेट कर ही रह जाते हैं पर, पराये धन की इच्छा तक नहीं करते हैं।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

श्री रामचन्द्र जी बोले—

गुरुदेव ! आप के अनमोल उपदेशों से मेरे मोह-भ्रम दूर हो गए। अब मुझे ब्रह्म से भिन्न कुछ नहीं दीखता। यह जगत्, इसकी भिन्न-भिन्न वस्तुएँ, जीवादि जो भिन्न-भिन्न रूपों में पृथक्-पृथक् दीखते थे—सो सब अब नहीं दीखते। अब तो सब ब्रह्म का ही विस्तार भासते हैं।

सब कुछ, ब्रह्ममय ही भासने से अपने-पराए का भाव, राग-द्वेषादि स्वतः निर्मूल हो गए। अब ब्रह्म से भिन्न किसी का स्थित्व ही नहीं है—तब किसको अपना समझूँ और किसको पराया ! किससे प्रेम करूँ और किससे नफरत ! जब, कम से कम, दो रहें; तब तो एक को अपना दूसरे को पराया, एक से प्रेम तो दूसरे से कुछ और !

ब्रह्म तो अविकारी है। सत्-चित्-आनन्द है। मेरा मन तो अब आप के उपदेशों से उसमें स्थिर हो गया। इससे अब मुझे किसी प्रकार का कष्ट नहीं व्यापता। अब, मैं शरीर के समस्त व्यापारों को चलाते हुए ही ब्रह्म में चित्त स्थिर रख आनन्द से जीवन-यापन कर सकूँगा !

प्रिय मित्र ! इतना सुन कर, महर्षि वशिष्ठ बहुत प्रसन्न हुए। राजा दशरथ मग्न हो गए। आत्म-बोध से उनके प्रिय-पुत्र का मुरझाया हुआ चेहरा खिल उठा। समस्त सतसंग-मंडली गद्-गद् हो गयी।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

महर्षि वशिष्ठ आगे बोले—

प्रिय वत्स राम ! जो कुछ मुझे कहना था—सो मैं कह चुका। मुझे खुशी है कि तुझे तत्काल ज्ञान की रोशनी मिली और तेरी अंधकार रूपी अविद्या दूर हो गई।

प्रिय वत्स ! कहे हुए वचनों को तू बराबर मनन करते रहना। ऐसा न करने से भूल जाने की संभावना है। ब्रह्म में दृढ़ आस्था रख, उनमें ही मन को पिरोए हुए, अपने समस्त नियत कर्मों को निष्काम भाव से करता हुआ सुख-शांति से जीवन-यात्रा समाप्त कर।

प्रिय मित्र ! सारे योग-वाशिष्ठ की चर्चा समाप्त हुयी। इसके उपदेशों को जीवन में उतारना बाकी है, जिसके लिए आजीवन कोशिश करते रहें।

आप की प्रेरणा से धर्म-ग्रन्थों के चिन्तन में लगा रह, मैं बहुत लाभान्वित होता रहा हूँ। उसके लिए, आप को चाहे जितनी बार धन्यवाद दूँ—कम ही होगा ! फिर, किसको धन्यवाद ! हम—आप दो थोड़े हैं ! नाम के दो शरीर—बोलता जीव—आत्मा—एक ! दोनों के दिल एक। दिल-रूपी दो वीणों पर तार-राशि एक। एक के बजाने से दूसरी खुद बजती है। दोनों साथ-साथ एक राग छेड़ती हैं।

प्रिय मित्र ! बराबर से तो यही होते आ रहा है—जब इधर बेचैनी तब उधर भी; उधर तो इधर भी ! इतना तो हम लोग आजमा चुके हैं—बार-बार अनेक बार !

विदा होने के पहले, आइए, कुछ व्यक्तिगत बातें और कर लें—

"करीब ३०–३५ वर्ष पहले—संभवतः छात्र जीवन में ही, मैंने किसी पुस्तक में इस प्रकार पढ़ा—

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

"अब-तक लोग अपने अथक परिश्रम से ही महान् बने हैं। जब साधारण लोग अपने अवकाश के समय को आलस्यादि में बिता गए; तब वे लोग नियमित रूप से अपनी ज्ञान-वृद्धि आदि में लगे रहें। प्रति दिन थोड़ा-थोड़ा पढ़ते-पढ़ते ३०—३५ वर्षों में विद्वान हो गए। थोड़ा-थोड़ा एकत्र होते-होते उनकी ज्ञान-राशि भरपूर हो गई।"

प्रिय मित्र ! उपर्युक्त बातें मेरे दिल में घर कर गईं। तब से ज्ञान-वृद्धि में लगा रहा। लेकिन फल उलटा हुआ—ज्ञान-पिपासा बुझने के बदले और बढ़ती गई।

प्रिय मित्र ! दुनिया में सब कुछ परिश्रम से ही हासिल होता है। तेल अपने को जला कर ही रोशन करता है परिश्रम रूपी अग्नि में तन को तपाने से ही कोई अभूत पूर्व कार्य हो सकेगा। अतएव, अनवरत परिश्रम करते जायँ।

प्राणी धनी-गरीब, शिक्षित-अशिक्षित, उच्च-नीच परिवारों में जन्मते हैं। जीवन में सब को एक-सा साधन प्राप्त नहीं होता। लेकिन परिश्रम करने का हकदार सभी एक-सा रहते हैं। परिश्रम-रूपी धन सब को एक-सा प्राप्त रहता है। उसका सही उपयोग अवश्य होना चाहिए। सच पूछिए, तो यह बात मेरे दिल में बचपन में ही बैठ गई। इससे मैं निराश व हतोत्साह होने से बराबर बचा रहा।

आप की सुविधा के लिए, सब का निचोड़ उपसंहार के रूप में मैं अगले पत्र में देने का प्रयास करूँगा। तब-तक के लिए, विदा कीजिए।

अनंत शुभ कामनाओं के साथ।

सप्रेम प्रणाम !

आपका आत्म स्वरूप

गणेश।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उपसंहार

प्रिय मित्र, **जमशेदपुर**

१२-१-६७

सादर प्रणाम !

सारे योग-वाशिष्ठ की चर्चा हो चुकी है। निचोड़ निम्नाङ्कित है :—

संसार में, एक ब्रह्म ही सत्य है। सारा जगत् उसका ही विस्तार है। वह सत्ता मात्र है। उसका कोई आकार नहीं है। वह किसी भी तत्व से नहीं बना है। वह क्या है ? कैसा है ? कब से है ? कहाँ है ?—आदि का पता लोग लगाते ही रह गए, पर कोई भी कुछ निश्चित रूप से जान न पाया। थक कर, लोगों ने कह दिया—वह शक्ति अपरम्पार है; अथाह है—इत्यादि, इत्यादि !

ब्रह्म नामक अद्भुत शक्ति चर्म-चक्षुओं से देखी नहीं जा सकती। वह दिखाई नहीं जा सकती। प्रयोगशालाओं में यंत्र द्वारा उसका पता लगाया नहीं जा सकता ! पर वह शक्ति है सर्वत्र ! सब में है। सब उसी में हैं। उसके बिना भी कुछ नहीं है, उसके परे भी कुछ नहीं हैं। थोड़े में वह ब्रह्म नामक शक्ति सब ठौर, सब समय सब में व्याप्त है। सब में वह एक ही ज्योति जल रही है।

मित्र ! उपर्युक्त बातों का प्रमाण—साधना के शुरू शास्त्र व गुरु, मित्रादि के वचनों में प्रतीति, अटूट विश्वास और श्रद्धा......।

मित्र ! आगे चल कर लोगों ने उस शक्ति का नाम-करण किया;—किसी ने ब्रह्म कहा, किसी ने ईश, ईश्वर प्रभु आदि, किसी ने खुदा कहा, तो किसी ने गौड (God) कह दिया। अनेक नाम, मित्र ! गिनाए नहीं जा सकते।

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

उस ब्रह्म की जानकारी ही सच्चा ज्ञान है। आत्म-बोध, आत्म-ज्ञान, आदि इसी—ब्रह्म की जानकारी—का ही नाम है। यह ब्रह्म-ज्ञान केवल शास्त्रों के पठन-पाठन, उपदेशों के सुनने व याद कर लेने से ही नहीं प्राप्त होता। चित्त-शुद्धि आवश्यक है। निर्मल काया में ही ब्रह्म के स्थित्व का आभास मिलता है।

ब्रह्म का आभास मिलते ही, सब कुछ ब्रह्ममय प्रतीत होने लगता है। उससे, भिन्न कुछ नजर नहीं आता! उसी की ज्योति सब में जलती भासती है। उसी ज्योति को लोग आत्मा कहते हैं! उस पर अनेक प्रकार से वाद-विवाद, तर्क-वितर्क करते हैं।

आत्मा रूप में एक ही ब्रह्म सब में विराजमान रहता है। इस नाते, सभी एक हैं। सभी उस ब्रह्म के ही फैलाव हैं! इसका आभास ही एकत्व आत्मा का ज्ञान है।

सारा जगत् काल्पनिक है। मन की ही उपज है। अज्ञानवश ही जीव को जगत्-जाल भासता है। ज्ञान से ही इसका लोप होता है। इसके लोप होते ही, ब्रह्म का आभास मिलता है। फिर, चित्त ब्रह्म में अविचलित रूप से रम जाता है। प्राणी, फिर, सभी प्रकार के दुःख-द्वन्दों से बरी हो जाता है। उसका मन तो निरन्तर आनन्द-मय ब्रह्म में विभोर रहता है। उसे दुःख काहे का।

मन की उक्त स्थिति का ही नाम जीवन-मुक्ति है; जब जीव, जीवन-काल में ही, माया-जाल को तर जाता है। वही मर कर विदेह-मुक्त हो जाता है, यानी पूर्ण-निर्वाण पा जाता है।

ज्ञान की सात भूमिकाएँ—शुभेच्छा, विचारना, तनुमानस, सत्त्वा पत्ति, असंसक्ति, पदार्थभावनी और तुर्यणा—हैं। साधक के चित्त की स्थिति ही भूमिका कही गई हैं।

साधक के मन से जब सद्विचार उठते हैं, तब वह ज्ञान की प्रथम भूमिका-शुभेच्छा-में होता है। उन सद्विचारों पर, जब वह गौर करता है—सोचता-विचारता है—तब वह ज्ञान की दूसरी

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

भूमिका–विचारना–में, होता है। सोचने-विचारने से, जब उन सद्-विचारों में उसका मन टिकने लगता है; तब वह ज्ञान की तीसरी भूमिका–तनुमानसा–में होता है। तीनों भूमिकाओं के अभ्यास से जब, मन विषय-वासनाओं से हट कर आत्मा में स्थिर होने लगता है; तब वह ज्ञान की चौथी भूमिका–सत्वापत्ति—में होता है। जब साधक का मन विषय-वासनाओं, से बिलकुल, विलय हो जाता है; तब ज्ञान की पाँचवीं भूमिका-असंसक्ति—में होता है। मन जब फुरना बंद कर, बिलकुल निर्विकल्प हो जाता है, तब संसार व इसके पदार्थों का लोप हो जाता है;––प्राणी तब ज्ञान की छठी भूमिका–पदार्था भावनी–में होता है।

उपर्युक्त छवों भूमिकाओं को पार कर लेने पर, प्राणी का मन स्वतः अविचल रूप से ब्रह्म में स्थिर हो जाता है। तब वह ज्ञान को सातवीं भूमिका–तुर्यणा–में होता है। उसे, फिर, सब कुछ ब्रह्म का ही विस्तार प्रतीत होता है। किसी ने कहा है न––"जिधर-देखता हूँ––उधर तू ही, तू है।"

प्रिय मित्र! यही साधना की अंतिम-अवस्था है। इसी अवस्था में जीव जीवन-मुक्त कहलाता है। इसकी प्राप्ति ही जीवन की सब से बड़ी कामयाबी है।

मित्र! कब से, आप के मन में, निरंतर सद्विचार उठते रहे हैं। आपने उन पर गौर भी किया है––विचारा है। अमल में भी लाया है। मन को परमात्मा में पिरो रखने की कोशिश भी आपने की है। भगवान् के स्थित्व में आप की अटूट आस्था है–अटल विश्वास है। बस, अब आप अपने मन को अविचल रूप से भगवान् में रमा दीजिए। उसमें ही पिरो दीजिये। आप का बेड़ा पार! आप के साथ मेरा भी।

प्रिय मित्र! अपने लम्बे-लम्बे पत्रों में बहुत कुछ कह चुका हूँ! गाए गीत को क्या गाना! लिखने-पढ़ने का सार तो है––पढ़े हुए

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

को––जीवन में उतारने में, आचरण में लाने में, अपने उसके अनुरूप ढालने में।

प्रिय मित्र ! हो सकता है––इस क्रम का यह अंतिम पत्र हो। अब, आप इतने से संतोष कर लें। मुक्ति मिल गई तो हम दोनों ब्रह्म में मिल एक हो जाएँगे। कहीं न मिल सकी तो—मुझे विश्वास है––दोनों अगले जन्म में भी साथ रहेंगे।

मेरे प्यारे मित्र ! जब-जब फुरसत मिले, गीतामृत, कठोपनिषद्-प्रकाश अथवा योगवाशिष्ठ-प्रवेश को थोड़ा-थोड़ा नित्य पढ़ा करें। खास कर, मन जब कभी उलझ जाय; तो गीतामृत पढ़ लिया कीजिएगा। उलझन दूर हो जाएगी। आप को उचित सलाह मिल जाएगी।

मैं आज हूँ। कल न भी रह सकता हूँ, पर ये रचनाएँ रहेगी ! आप के लिए मेरी कमी को ये ही पूरी करेंगी। मेरी ओर से, आप को नेक सलाह ये रचनाएँ ही देंगी। मेरा प्रतिनिधित्व ये ही करेंगी। मेरी झांकी इनमें ही मिलेगी !

प्रिय मित्र !

सर्वस्तरतु दुर्गाणि, सर्वो भद्राणि पश्यतु।
सर्वस्सदबुद्धिमाप्नोतु, सर्वस्सर्वत्र नन्दतु॥
दुर्जनः सज्जनो भूयात् सज्जनः शान्तिमाप्नुयात्।
शान्तो मुच्येत वन्धेभ्यो मुक्तश्चान्यान् विमोचयेत्॥

सब लोगों का दुःख दूर हो, सभी भलाई में लगें. सब को सद बुद्धि मिले. सभी सर्वत्र प्रसन्न रहें; दुर्जन सज्जन बन जाँय; सज्जन को शांति मिले. शांत जीव संसार-बंधन से मुक्त हो जाँय और जीवन-मुक्त औरों को मुक्त करें––यही मेरी एक मात्र आखिरी कामना है।

वस ! अब, विदा दें !

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

जाते-जाते ईशबन्दना कर ली जाय--

त्वमेव माता च पिता त्वमेव,
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या, द्रविणं त्वमेव,
त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥

अनंत शुभ कामनाओं के साथ सस्नेह शुभाशीर्वाद। **सादर प्रणाम !**

आप का आत्मरूप
'गणेश'

सत्यमेव जयते !

———

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri.Funding: MIDF

आध्यात्मिक ग्रन्थों के मार्मिक विद्वान्
श्रीगणेश चौबे जी
की निम्नलिखित अनुपम कृतियों के अध्ययन से जीवन का लाभ उठाइए।

(१) गीतामृत

(श्रीमद्भगवद्गीता का सुन्दर, सरल भावमय विवे

(२) कठोपनिषद्-प्रकाश

(कठोपनिषद् की सरल बोधगम्य व्याख्या)

(३) योगवाशिष्ठ-प्रवेश

(४) मेघदूत-दर्शन

(५) मनुस्मृति-संदेश

प्राप्ति-स्थान

(क) श्री किशोरी प्रसाद, ब्रास आर्टस पैलेस,
चर्च रोड, राँची

(ख) राजेन्द्र स्टोर्स, साकची बाजार, जमशेदपुर

(ग) गुप्ता स्टोर्स, धतकीडिह, जमशेदपुर

(घ) श्री सत्यरंजन, संचालक, ज्योत्स्ना प्रकाशन-मन्दिर
स्टेशन रोड, डिहरी, पो० डालमियानगर
(बिहार)

Nepal Sanskrit University, Balmeeki Campus, Kathmandu